फासीवाद और सोवियत समाजवाद

"फासीवाद वित्तीय पूंजी के सबसे ज्यादा प्रतिक्रियावादी, सबसे ज्यादा अंधराष्ट्रवादी और सबसे ज्यादा साम्राज्यवादी तत्वों की खुली तानाशाही है। फासीवाद निम्न पूंजीपति वर्ग के बीच से किसानों, शिल्पकारों, ऑफिस कर्मचारियों और सरकारी अधिकारियों (जो जीवन के अपने सामान्य हालत से बाहर फेंके जा चुके हैं) और विशेषकर बड़े शहरों के वर्गच्युत तत्वों से अपील करते हुए एकाधिकारी पूंजीवाद के लिए जन-आधार हासिल करने का प्रयास करता है। यह मजदूर वर्ग में भी घुसपैठ करने का प्रयास करता है।" [The Thesis Of the Thirteenth EECI Plenum On Fascism, The War Danger & the Tasks Of Communist Parties, Vol-III, Documents Of Communist International by Jean Dagras, Page -296, अनुवाद व जोर हमारा]

"फासीवाद का मुख्य लक्ष्य मजदूरों के क्रांतिकारी हरावल को अर्थात सर्वहारा के कम्युनिस्ट हिस्सों और प्रमुख दस्तों को नष्ट करना है। पर राष्ट्रनीति के क्षेत्र में उग्र साम्राज्यवादी आक्रमण के साथ-साथ सामाजिक लफ्फाजी, भ्रष्टाचार और सक्रिय श्वेत आतंक फासीवाद के लाक्षणिक अंग हैं। **बुर्जुआ वर्ग के भारी संकट कालों में फासीवाद, पूंजीवाद विरोधी शब्दावली का सहारा लेता है, लेकिन राजसत्ता पर जमकर बैठ जाने के बाद वह अपनी पूंजीवाद विरोधी मुहावरेबाजी ताक पर रख देता है।** और बड़ी पूंजी की आतंकवादी तानाशाही के रूप में प्रकट होता है।"

-दिमित्रोव

('फासीवाद' नामक पुस्तक में अयोध्या सिंह द्वारा उद्धृत, पेज-15, ग्रंथ शिल्पी, नयी दिल्ली, जोर हमारा)

I

पूंजीवादी दायरों में फासीवाद के संदर्भ में आज जब चर्चा होती है तो इस रूप में होती है मानो उसका पूंजीवाद, साम्राज्यवाद से कोई लेना-देना नहीं था। उसको पालने-पोसने में पूंजीपति वर्ग की कोई भूमिका न थी। वह संकट ग्रस्त पूंजीवाद की आम प्रवृत्ति न थी बल्कि एक अपवाद , एक विकृति थी। हिटलर, मुसोलिनी जैसों की सनक थी। उनकी व्यक्तिगत तानाशाही थी और स्तालिन की तानाशाही से टकरा कर और उदार पूंजीवाद के कारण ये तानाशाहियां समाप्त हो गयीं। एक खत्म हो गयी, उदार पूंजीवाद के लिए अच्छा होता कि दोनों खत्म हो जातीं। उस वक्त वे सोचते थे कि समाजवाद क्यों कर बच गया।

फासीवाद को पालने-पोसने और उसको विराट दैत्य बनने देने में, साम्राज्यवाद खासकर अमेरिकी और ब्रिटिश साम्राज्यवाद के शासकों ने कभी अपनी गलती नहीं स्वीकार की। कभी भी उन्होंने नहीं माना कि दूसरे विश्व युद्ध की तबाही से काफी पूर्व, सोवियत संघ द्वारा फासीवाद से लड़ने के साझा प्रस्तावों को नहीं स्वीकारना उनकी एक भारी गलती थी। इस गलती की सजा करोड़ों निर्दोष लोगों को अपनी जान देकर चुकानी पड़ी।

अमेरिकी व ब्रिटिश साम्राज्यवादी शासक अपने घृणित प्रतिक्रियावादी चरित्र के कारण कभी अपनी गलती नहीं मान सकते थे। वे तो अंत तक यही चाहते थे कि सोवियत संघ में समाजवाद का पतन हो जाय। महान सर्वहारा नेता स्तालिन फासिस्ट हिटलर के हाथों मारे जायें। दूसरे विश्व युद्ध में हिटलर के खिलाफ इन्होंने अपनी सेनायें तभी मोर्चे पर भेजीं जब इन्हें लगने लगा कि कहीं सारा यूरोप ही उनके हाथ से न निकल जाये और पूरा का पूरा लाल न हो जाये, यूरोप का हर मजदूर बोल्शेविक न हो जाये। तथ्य साक्षी हैं कि ये सोवियत समाजवाद की बढ़त को रोकने के लिए मैदान में उतरे न कि हिटलर के फासीवाद को तेजी और शीघ्रता से खत्म करने के लिए।

आज साम्राज्यवाद के विचारक, लेखक, अध्येता सोवियत संघ और उसके नेता स्तालिन की फासीवाद को निर्णायक शिकस्त देने में भूमिका को कम करके पेश करते हैं। वे अक्सर ही फासीवादी तानाशाह हिटलर को महान सर्वहारा नेता स्तालिन के समकक्ष रखने की कोशिश करते हैं। वे कभी इस बात की चर्चा नहीं करते कि एक बड़ी व ताकतवर साम्राज्यवादी शक्ति फ्रांस कैसे दो हफ्ते भी हिटलर के सामने टिक न सकी और क्यों हिटलर सोवियत संघ के खिलाफ अपनी पूरी ताकत झोंकने के बाद भी कामयाब नही हो सका। वे सोवियत संघ के लोगों के साहस, बलिदान, क्षमता ओर उन्हें मिले श्रेष्ठ नेतृत्व की मामूली चर्चा करना भी पसन्द नहीं करते हैं।

यह अनायास नहीं है कि इतिहास के साथ ऐसा व्यवहार किया जाता है मानो फासीवाद के खात्मे में सोवियत समाजवाद का कोई योगदान ही न हो। सोवियत समाजवाद की भूमिका को सही और वस्तुगत तौर पर स्वीकार करने से ऐसे परिणाम निकलेंगे जो कि साम्राज्यवाद, पूंजीवाद के भविष्य और अस्तित्व के लिए घातक होंगे।

सोवियत समाजवाद, लाल सेना और स्तालिन की भूमिका स्वीकार करने का अर्थ होगा साम्राज्यवाद व पूंजीवादी व्यवस्था की कमजोरियों को स्वीकारना। मानना पड़ेगा कि समाजवाद पूंजीवाद से श्रेष्ठ व्यवस्था है। मानना पड़ेगा कि सोवियत समाजवाद में मजदूर, किसान सहित सभी जनगण वास्तविक शासक थे और किसी पार्टी या व्यक्ति के इशारे पर नही बल्कि खुद के लिए, अपने समाज व देश के लिए लड़ रहे थे। मानना पड़ेगा कि लाल सेना मजदूरों, किसानों की सेना थी। वह न सिर्फ सोवियत संघ की रक्षा के लिए लड़ी

बल्कि वह पोलैण्ड, रोमानिया, बुल्गारिया, हंगरी आदि आदि देशों की फासीवादी तानाशाही से मुक्ति के लिए लड़ी। यहां तक कि स्वयं जर्मन सेना की जनता की फासीवादी तानाशाही से मुक्ति लाल सेना की बहादुरी, बलिदान और संघर्षशीलता के कारण ही संभव हो सकी। लाल सेना इसलिए यह सब कर सकी क्योंकि उसके पीछे सोवियत जनता, सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी और साथ ही महान स्तालिन का कुशल नेतृत्व था।

बीसवीं सदी के तीसरे-चौथे दशक में ऐसा कोई पूंजीवादी देश नहीं था जहां फासीवादी प्रवृत्तियां लिए हुए संगठन, संस्थाएं न पैदा हुयी हों। इन संस्थाओं, संगठनों को पूंजीपति वर्ग खासकर एकाधिकारी पूंजीपति वर्ग का संरक्षण प्राप्त था। अक्सर ही राज्य इनको फलने-फूलने का मौका देता था। संकटग्रस्त पूंजीवाद फासीवाद के लिए न केवल भौतिक बल्कि आत्मिक जमीन भी उपलब्ध कराता है। यह उसके चरित्र के कारण है।

फ्रांस, सं. रा. अमेरिका, ग्रेट ब्रिटेन, स्वीडन, नार्वे, बेल्जियम आदि ऐसे देश थे जिनमें ठीक उसी समय फासीवादी समूह पैदा हुए जिस वक्त इटली, जर्मनी, स्पेन, जापान में फासीवाद तेजी से सफलता प्राप्त कर रहा था। एक समय तो सोवियत संघ की सीमाओं को छोड़कर पूरा यूरोप ही फासीवाद की गिरफ्त में आ गया था। यह फासीवाद इनके देश के भीतर ही जन्मा और पनपा था। बाद में यह हिटलर के यूरोप के कई देशों में कब्जे में सहायक हुआ था।

कम्युनिज्म, समाजवाद, सोवियत संघ, बोल्शेविक पार्टी और उसके नेताओं आदि कि खिलाफ कुत्सा प्रचार में जितना धन, समय और ऊर्जा विश्व साम्राज्यवाद ने पिछली और इस सदी में लगाया है, उसका एक फीसदी हिस्सा भी उसने फासीवाद, फासीवादी कुकर्मों और हिटलर, मुसोलिनी, फ्रैंको की लानत-मलानत में नहीं लगाया है। आज भी, नवफासीवादी उभार के समय, ऐसा ही हो रहा है। पूरी पूंजीवादी दुनिया में एक भी ऐसा देश नहीं है जहां नवफासीवादी, नस्लवादी आदि घोर प्रतिक्रियावादी शासकों की गोद में न बैठे हों। कई जगह तो यह सत्ता में भागीदारी तक करने लगे हैं। ये बातें अपनी कहानी आप कह देती हैं।

फासीवाद को शिकस्त देने में सोवियत संघ और सर्वहारा नेता स्तालिन की भूमिका को कमतर आंकने या नजरअंदाज करने में विश्व पूंजीवाद के कर्ता-धर्ताओं के अलावा ऐसे लोगों की संख्या भी अच्छी-खासी है जो मजदूर आंदोलन के गद्दार हैं। इनमें काउत्स्की-त्रात्स्कीपंथियों से लेकर ख्रुश्चोव तक शामिल हैं। ख्रुश्चोवपंथी सोवियत समाजवाद की भूमिका को तो एक हद तक स्वीकारते हैं परन्तु ये साबित करने में लगे रहते हैं कि ख्रुश्चोव जैसों की भूमिका फासीवाद को हराने में प्रमुख थी। 'स्तालिन तो हिटलर के हमले के समय हक्के-बक्के रह गये थे।' कि 'पूरे दूसरे विश्वयुद्ध के दौरान उनकी भूमिका औसत दर्जे की थी।' ख्रुश्चोव की इन बातों को साम्राज्यवादी देशों ने हाथों-हाथ लिया उन्हें स्तालिन और सोवियत समाजवाद पर हमले के नये हथियार मिल गये।

इस लेख में आगे इन्हीं बातों को किंचित कुछ विस्तार व गहराई से प्रस्तुत किया गया है।

II

फासीवाद का जन्म, विकास और विस्तार

जिस वक्त सोवियत संघ भीतरी और बाहरी चुनौतियों का साहसपूर्वक सामना करते हुए, तेजी से, समाजवादी निर्माण कर रहा था ठीक उसी वक्त संकटग्रस्त पूंजीवादी देश एक-एक करके फासीवादी तानाशाही की ओर बढ़ रहे थे। पिछली सदी के बीस व तीस के दशक में सभ्यता और बर्बरता अपने-अपने नये शीर्षों का निर्माण कर रही थी। एक ओर मानवजाति को प्रकाश के एक नये युग की ओर ले जाने की कोशिशें हो रही थीं तो दूसरी ओर अंधकार और गहरे अंधकार में धकेलने में फासीवादी ताकतें लगी हुयीं थीं।

फासीवाद सबसे पहले इटली (सन् 1922) में सत्ता पर काबिज हुआ। उसके बाद अगले एक-डेढ़ दशक में ही यह कई देशों में सत्ता पर कब्जा कर चुका था। जर्मनी (1933), आस्ट्रिया (1933-34), बुल्गारिया (1934), हंगरी (1932), पुर्तगाल (1933), पोलैण्ड (1935), और स्पेन (1939) में फासीवादी सत्ताएं कायम हो चुकी थी।

इस लेख में फासीवाद का इस्तेमाल सिर्फ इटली के लिए नहीं बल्कि उन सभी देशों के लिए किया जा रहा है जहां भी बुर्जुआ जनतंत्र का स्थान खुली आतंकवादी तानाशाही ने ले लिया था। इटली में इसने फासीवाद, जर्मनी में नाजीवाद, स्पेन में फालांजवाद आदि का रूप धारण किया था। अलग-अलग देशों के हिसाब से फासीवाद के रूप के अलावा चरित्र, सिद्धान्त में कुछ भिन्नताएं मौजूद थीं परन्तु खुली आतंकवादी तानाशाही के मामले में ये पूर्णतः एक जैसे थे। अलग-अलग देशों में, अलग-अलग तरह से बुर्जुआ जनतंत्र को इन्होंने कुचल डाला था। मजदूर वर्ग और कम्युनिस्टों पर बर्बर और भीषण हमला बोला था। राज्य, राष्ट्र, नस्ल आदि के नाम पर इन देशों में खुली नंगी तानाशाही कायम की थी। इसीलिए तीसरे इंटरनेशनल ने फासीवाद को परिभाषित करते हुए कहा था कि फासीवाद वित्तीय पूंजी के सबसे ज्यादा प्रतिक्रियावादी, सबसे अंधराष्ट्रवादी और सबसे ज्यादा साम्राज्यवादी तत्वों की खुली आतंकवादी तानाशाही है।

यह तानाशाही मजदूरों-मेहनतकशों को मिले थोड़े-मोड़े जनवाद का ही नहीं बल्कि पूंजीपति वर्ग के एक अच्छे-खासे हिस्से के जनवाद का भी अपहरण कर लेती है। व्यक्ति अपने सभी जनवादी अधिकारों से वंचित होकर पूर्णतः राज्य के मातहत हो जाता है। और राज्य वित्तीय पूंजी के हितों से पूर्णतः संचालित एक व्यक्ति (मसलन हिटलर, मुसोलिनी, फ्रांको) के मातहत होता है।

फासीवाद की उत्पत्ति और विकास के संदर्भ में कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की छठी कांग्रेस (1928) में दी गयी थीसिस कहती है :

"कुछ विशेष ऐतिहासिक हालात में बुर्जुआ, साम्राज्यवादी, प्रतिक्रियावादी आक्रमण की प्रगति फासीवादी रूप धारण करती है।

यह हालत है : पूंजीवादी सम्बन्धों की अस्थिरता, अपने वर्गों को छोड़ देने वाले काफी सामाजिक तत्वों का अस्तित्व, शहरी पेटी बुर्जुआ और बुद्धिजीवियों के बहुत बड़े हिस्से का निस्व होना, देहात के पेटी बुर्जुआ में असंतोष और अंत में सर्वहारा के जनसंग्राम का बराबर खतरा। अपना राज दृढ़ करने और चिरस्थायी बनाने के लिए बुर्जुआ वर्ग संसदीय व्यवस्था को छोड़कर फासीवादी व्यवस्था को, जो विभिन्न पार्टियों के बीच बंदोबस्तों और गठबंधनों से स्वाधीन होती है, अपनाने को उत्तरोत्तर बाध्य होता है।"

(फासीवाद, अयोध्या सिंह, पेज 15)

कम्युनिस्ट इंटरनेशनल ने 1933 में जब जर्मनी की सत्ता पर एडोल्फ हिटलर काबिज हो गया तब अपने एक प्लेनम में फासीवाद के आने के निम्न कारण गिनाये :

"1- क्रांतिकारी संकट और पूंजी के शासन के विरुद्ध व्यापक जनता का रोष बढ़ रहा है।

"2- पूंजीपति वर्ग आम तौर पर संसदवाद और बुर्जुआ जनवाद के पुराने तौर-तरीकों से अपनी तानाशाही को लम्बे समय तक बरकरार रख पाने में समर्थ नहीं है।

"3- और भी, आम तौर पर संसदवाद और बुर्जुआ जनवाद के तरीके, पूंजीपति वर्ग के लिए दोनों ही अपनी आंतरिक राजनीति (सर्वहारा के विरुद्ध संघर्ष) और विदेशी राजनीति (दुनिया के साम्राज्यवादी पुनर्वितरण के लिए युद्ध) के लिए बाधक बन रहे हैं।"

(The Communist International Documents, 1919-1943, Ed. Jean Degras Volume-III, page-296, अनुवाद हमारा)

कम्युनिस्ट इंटरनेशनल ने फासीवाद के चरित्र, जन्म और विकास पर सही सूत्रीकरण पेश किया। इसके उलट दूसरे इंटरनेशनल से जुड़ी पार्टियों, सामाजिक जनवादियों ने फासीवाद के बारे में भ्रम फैलाया। महज कुछ चुनावी सफलताओं के आधार पर झूठ फैलाया कि फासीवाद का खतरा मिट चुका है। इनसे और बुरा हाल पूंजीवादी जनवादी पार्टियों का था। वे लगातार फासीवादियों को छूटें देते रहे और फासीवादी पार्टियों के झूठ फरेब पर सहज तौर पर विश्वास करते रहे। उन्हें अंत तक यकीन था कि फासीवादी उनके साथ मित्रों जैसा व्यवहार करेंगे।

स.रा. अमेरिका, ब्रिटेन, फ्रांस जैसे साम्राज्यवादियों का व्यवहार तब तक सहयोग और बढ़ावा देने वाला था जब तक कि वे इन साम्राज्यवादियों के लिए वास्तविक खतरा नहीं बन गये। शुरू से ही वे फासीवाद का इस्तेमाल सोवियत समाजवाद को ध्वस्त करने से लेकर अपने देश के मजदूर व कम्युनिस्ट आंदोलन को खत्म करने के लिए करते रहे। 1941 में सोवियत संघ पर फासीवाद के हमले से उन्हें पूर्ण उम्मीद थी कि सोवियत संघ खत्म हो जायेगा और फिर वे आराम से फासीवाद से सुलह-समझौते या उसे खत्म करके पूरी दुनिया में कब्जा जमा लेंगे। इस तरह से देखें तो जिन देशों में वित्तीय पूंजी की खुली आतंकवादी तानाशाही कायम हुयी थी उनकी सं.रा. अमेरिका व ब्रिटेन के साम्राज्यवादियों ने भरपूर मदद की और अपनी बारी में इन्होंने भारी मुनाफे बटोरे थे। दूसरे विश्व युद्ध के शुरू होने के पहले तक का इतिहास यही रहा। दूसरे विश्व युद्ध के शुरू होने के बाद भी लम्बे समय तक अमेरिकी साम्राज्यवादी 'इंतजार करो और देखो' की नीति पर चलते रहे।

चूंकि आगे लेख में बराबर 'पांचवां कालम' (पांचवा दस्ता) शब्द का प्रयोग होगा अतः इसके बारे में पहले ही चर्चा कर ली जाय।

'पांचवा कालम' शब्द सबसे पहले प्रचलन में स्पेन के गृहयुद्ध के समय उस समय आया जब फ्रैंको स्पेन के मैड्रिड शहर में हमला करने वाला था। 'पांचवां कालम' के लोग वे थे जो कि फ्रैंको के गुप्त अनुयायी थे और इन्होंने फ्रैंको के मेड्रिड शहर में कब्जे के दौरान उसकी मदद की थी। बाद के समय में यह शब्द फासीवादी हिटलर के काले कारनामों का साथ देने वालों के लिए प्रयोग होने लगा और इतिहास में इसी रूप में जाना जाता है। हिटलर का पांचवां कालम यूरोप के कई देशों की सरकारों में इस तरह से काबिज होता था कि जैसे ही हिटलर हमला बोलता तो ये सरकारें धराशायी हो जातीं और हिटलर तुरन्त उन देशों पर कब्जा कर लेता।

III

साम्राज्यवाद, फासीवाद और समाजवाद

पश्चिमी साम्राज्यवादी देशों के राजनीतिज्ञ, इतिहासकार और दार्शनिक फासीवाद और समाजवाद को एक ही धरातल पर रख कर आलोचना करते रहे हैं। यह अतीत से लेकर आज तक जारी है।

उनके लिए फासीवाद और समाजवाद दोनों तानाशाहियां थीं। दोनों अपने चरित्र में सर्व सत्तावादी थीं। और वे इन दोनों के खिलाफ उदार पूंजीवाद को श्रेष्ठतर व्यवस्था बतलाते हैं। वे उस समय भी अपने को दोनों से श्रेष्ठ, अलग और स्थायी व्यवस्था के रूप

में पेश करते थे जब फासीवाद और समाजवाद दोनों मौजूद थे और आज भी जब समाजवादी सत्ताएं अस्तित्वमान नहीं रहीं हैं। वे कहते हैं : न फासीवाद, न समाजवाद बल्कि उदार पूंजीवाद।

उनका आरोप है कि राज्य (स्टेट) दोनों में शक्तिशाली होता है। व्यक्तिगत स्वतंत्रता राज्य द्वारा हस्तगत कर ली जाती है। इनमें बहु पार्टी व्यवस्था समाप्त कर एक दलीय शासन तंत्र होता है। और वास्तव में एक दल का भी शासन नहीं होता है बल्कि एक व्यक्ति हिटलर या स्तालिन के हाथों में सत्ता की सारी बागडोर होती है। दोनों में ही ऐसी सामाजिक जकड़बंदी थी कि एक न एक दिन उन्हें खत्म होना ही था। इसके बरअक्स उदार पूंजीवाद में जनवाद होता है। बहुपार्टी व्यवस्था के साथ व्यक्ति की निजी सम्पत्ति व स्वतंत्रता कायम होती है अतः व्यक्ति के विकास के अवसर समान रूप से मौजूद होते हैं।

उन्होंने आरोप लगाया कि हिटलर और स्तालिन ने अपने शासन को कायम करने के लिए लाखों लोगों का कत्ल किया। आतंक के जरिये अपनी सत्ता को कायम और बनाए रखा। सामाजिक जनवादियों और कुछ पूंजीवादी विचारकों ने फासीवाद को मध्य वर्ग की क्रांति कहा। कुछ पूंजीवादी दार्शनिकों, इतिहासकारों के लिए फासीवाद सामूहिक मानसिक व्याधि, बौद्धिक व नैतिक रोग, अल्पकालीन पागलपन, आत्मा की बीमारी आदि था।

पाठ्य पुस्तकों से लेकर तथाकथित गंभीर अकादमिक अध्ययनों में उदार पूंजीवाद द्वारा उपरोक्त बातों को बार-बार दोहराया जाता है। 1991 में सोवियत संघ के पतन के बाद यह जोर-शोर से कहा जाने लगा कि 'इतिहास का अंत हो गया है', 'कोई और विकल्प नहीं है (दीयर इज नो अल्टरनेटिव-टीना), 'उदार पूंजीवाद जीत गया है', इत्यादि।

आईये इस विषय पर चर्चा करें!

उदार पूंजीवाद द्वारा की गयी इस तुलना में तर्क और इतिहास की दृष्टि से देखा जाय तो सत्य का एक अंश भी नहीं है। यह तुलना सिर्फ और सिर्फ उदार पूंजीवाद को श्रेष्ठ दिखाने और अपने वीभत्स चरित्र पर पर्दा डालने की कवायद भर है। यह इस बात को छिपाना है कि फासीवाद अपने में एक ऐसा पूंजीवाद है जिसमें वित्तीय पूंजी की खुली आतंकवादी तानाशाही होती है। इस मामले में उदार पूंजीवाद 'साम्राज्यवाद' और फासीवाद एकाधिकारी पूंजी की ही राजनीतिक व्यवस्था है।

फासीवाद के उलट उदार पूंजीवाद वित्तीय पूंजी की छिपी तानाशाही होती है। कई पूंजीवादी पार्टियों के बीच चलने वाली रस्साकस्सी या संसदीय चुनावी संघर्ष अपने आप में पूंजी के विभिन्न गुटों के अपने-अपने हितों के लिए चलने वाला संघर्ष होता है। वित्तीय पूंजी अक्सर सारे संसदीय संघर्ष के ऊपर भारी पड़ती रहती है। सरकारें बनाना और गिराना वित्तीय पूंजी के लिए उदार पूंजीवाद में रोज का खेल है। बीसवीं सदी का ही नहीं इस सदी के पिछले दो दशकों का इतिहास इसका गवाह है।

इतिहास इस बात का गवाह है कि जब किन्हीं देशों में क्रांतिकारी संकट का काल होता है; जब मजदूर वर्ग का क्रांतिकारी संघर्ष स्थापित सत्ता को चुनौती दे रहा होता है तब ये देश तानाशाही की ओर बढ़ते हैं ताकि पूंजी की सत्ता बनी रहे। फासीवादी तानाशाही एकदम खुले व नंगे रूप में एकाधिकारी पूंजीवाद के हितों की सुरक्षा करती व उन्हें आगे बढ़ाती है। अपने भयावह कृत्यों से वह न केवल सर्वहारा बल्कि पूंजीपति वर्ग के एक हिस्से को भी त्रस्त कर देती है।

समाजवाद सर्वहारा वर्ग की तानाशाही है। इसमें कोई शक नहीं है। इस बात को मजदूर वर्ग के शिक्षकों, चिंतकों ने कभी नहीं छुपाया। उन्होंने बताया कि पूंजीवादी तानाशाही के बरक्स इतिहास में एक ऐसा काल होगा जब सर्वहारा वर्ग की तानाशाही आवश्यक और अपरिहार्य होगी। इस काल से गुजरे बिना साम्यवाद, जहां राज्य का, वर्ग और वर्ग संघर्ष का ही अंत हो जायेगा, नहीं आ सकता है। समाजवाद सर्वहारा वर्ग की तानाशाही का काल है, इस बात को मार्क्स, एंगेल्स, लेनिन, स्तालिन व माओ, सभी ने दोहराया। समाजवादी प्रयोगों के साथ सर्वहारा तानाशाही के बारे में विचार उन्नत व गहरे होते गये। आज हम मानते है कि सर्वहारा तानाशाही की सुदीर्घ अवधि होगी। और यह अवधि कई शताब्दियों तक जा सकती है। इस पूरे संक्रमण काल में सर्वहारा की तानाशाही जारी रहेगी।

समाजवाद के उलट उदार पूंजीवाद अपने समाज के वर्ग चरित्र व शासन के स्वरूप के बारे में सदा झूठ का सहारा लेता है। सच्चाई को छुपाकर यह भ्रम फैलाने की कोशिश करता है कि वह पूंजीपति वर्ग की तानाशाही नहीं है। वह यह झूठ फैलाता है कि 'जनता के द्वारा जनता के लिए जनता का शासन है'। ब्रिटिश शासन प्रणाली से लेकर अमेरिकी संसदवाद सबके सब पूंजीवादी तानाशाही के छिपे रूप हैं। संसदीय जनतंत्र के चरित्र के बारे में भ्रम फैलाकर उदार पूंजीवाद के चिंतकों से लेकर उसके लगुए-भगुए यह स्थापित करते हैं कि उनके यहां ऐसा जनवाद है जो हर व्यक्ति को उपलब्ध है। इतिहास में सच्चाई का तकाजा है कि ब्रिटिश संसदीय जनतंत्र से लेकर अमेरिकी जनतंत्र में भी लम्बे समय तक सार्विक मताधिकार नहीं था। महिलाओं को तो फ्रांस जैसे देश में भी मताधिकार दूसरे विश्व युद्ध तक भी हासिल नहीं हो सका था। इन देशों के जनवाद की पोल खोलने वाले सैकड़ों उदाहरण दिये जा सकते हैं। इन देशों में जनवाद वास्तव में सम्पत्तिवान लोगों को हासिल होता है। मजदूरों को औपचारिक मामूली जनवाद तभी तक हासिल होता है जब तक वह पूंजीवादी राज सत्ता को चुनौती देने की स्थिति में नहीं पहुंचता है।

समाजवाद में मजदूर वर्ग को जनवाद हासिल होता है जबकि पूंजीपति वर्ग के ऊपर तानाशाही थोपी जाती है। और ऐसा करना समाजाद को आगे बढ़ाने व टिकाये रखने के लिए अपरिहार्य होता है। मजदूर वर्ग की पार्टी-कम्युनिस्ट पार्टी- समाजवाद की स्थापना और निर्माण और उसके बाद साम्यवाद की ओर बढ़ने के पूरे काल में उसका नेतृत्व करती है। समाजवाद सर्वहारा वर्ग की तानाशाही है न कि उसकी पार्टी अथवा उसके नेतृत्व की।

सोवियत समाजवाद में जनवाद का विकास कितने ऊंचे स्तर तक हो गया था इसके बारे में खुद अमेरिकी, ब्रिटिश, फ्रांसीसी विद्वानों द्वारा अनेकों-अनेक किताबें लिखी जा चुकी हैं। सोवियत संघ के बारे में और खासकर सोवियत समाज के बारे में 1935 में

लिखी "सोवियत कम्युनिज्म : एक नई सभ्यता" (Soviet Communism: A New Civilisation. by Sidney and Beatrice webb, 1935) एक बेहतरीन किताब है। यह किताब उदार पूंजीवाद के सोवियत समावाद के बारे में किये गये कुत्सा प्रचार का अच्छा जवाब देती है।

सोवियत समाजवाद में जनवाद सिर्फ चुनावों में भागीदारी तक सीमित न रह के जीवन के हर क्षेत्र में लागू होता था। चाहे व्यक्ति उत्पादन की प्रक्रिया में लगा हो अथवा उत्पदित चीजों के अपभोक्ता के रूप में हो। नागरिक, उत्पादक, उपभोक्ता इन तीनों ही भूमिका में व्यक्ति को जिस उच्च स्तर का जनवाद सोवियत समाजवाद में हासिल था उसकी छाया भर भी जनवाद, उदार पूंजीवाद में, हासिल नहीं होता है। फासीवाद की तो बात ही क्या की जाय इसमें तो स्वयं पूंजीपति वर्ग के एक हिस्से का जनवाद छिन जाता है। निम्न पूंजीपति वर्ग, किसान और सर्वहारा वर्ग तो राज्य के महज दास बन जाते हैं। दास से भी बढ़कर फासीवाद ऐसे व्यक्ति तैयार करता है जो नरमुण्डों की माला पहनना गर्व की बात समझते हैं। राष्ट्रीय या नस्लीय गौरव के नाम पर कत्लेआम करना फासीवादी तानाशाही का रोज का काम होता है। यह बात सर्वविदित है कि हिटलर, मुसोलिनी, फ्रैंको जैसे फासीवादी तानाशाहों ने अपनी सत्ता को कायम करने अथवा अपने देश की सीमाओं का विस्तार करने के लिए कत्लेआम मचाया। लाखों यहूदियों को नाजीवादी हिटलर ने मौत के मुंह में निर्ममतापूर्वक धकेल दिया था। दूसरे विश्व युद्ध की जड़ में दुनिया के पुनर्बंटवारे का सवाल था। सोवियत समाजवाद संघर्षरत दोनों गुटों की आखों में लगातार खटक रहा था। बीसवीं सदी के तीस से लेकर पचास तक के दशक इस बात के तथ्यों और प्रमाणों से भरे पड़े हैं कि सोवियत समाजवाद के विनाश के लिए इन्होंने वह सब कुछ किया जो ये कर सकते थे। आगे के पृष्ठों में इन्हीं की चर्चा है।

जहां तक राज्य की बात है वह हमेशा से ही एक वर्ग द्वारा दूसरे वर्ग के दमन का यंत्र रहा है। उसकी उत्पत्ति इसी रूप में हुयी और इसी रूप में यह बना हुआ है। उदार पूंजीवाद का राज्य जहां पूंजीपति वर्ग के दमन का यंत्र है वहां समाजवादी राज्य सर्वहारा वर्ग के हितों को साधने वाला तथा पूंजीपति वर्ग और पूंजीवाद (बचे-खुचे रूपों सहित नये तत्वों की पैदाइश) का दमन करता है। समाजवादी राज्य सभी वर्गीय राज्यों से इस मामले में एकदम भिन्न है कि उसका लक्ष्य राज्य को ही समाप्त करना होता है।

फासीवादी राज्य उदार पूंजीवादी राज्य की तानाशाही, निर्ममता को उसके शिखर तक ले जाता है। वह एकाधिकारी पूंजीवाद के युग में वित्तीय पूंजी की आतंकवादी तानाशाही करने का औजार बन जाता है। और राज्य, राष्ट्र, नस्ल आदि के नाम पर जनवाद का पूर्ण अपहरण कर लेता है। जनवाद न वास्तविक बचता है और न औपचारिक।

सोवियत समाजवाद खासकर स्तालिन पर लाखों व्यक्तियों की हत्या का आरोप झूठा और बेबुनियाद है। इस विषय पर सभी कोणों से पर्याप्त चर्चा इस पत्रिका के पिछले अंक में की जा चुकी है। इसमें कोई शक नहीं कि समाजवादी राज्य को अपने विरोधियों का दमन करना पड़ा था और यदि वह ऐसा करता तो वह अपने को टिका कर नहीं रख सकता था। 1936-38 के काल में किये गये 'शुद्धीकरण अभियानों' का ही नतीजा था कि सोवियत संघ में हिटलर को अपने 'पांचवें कालम' के लिए कोई नहीं मिला था। यह विषय आगे के पृष्ठों में उठाया गया है।

फासीवाद को प्रश्रय देशी स्तर पर एकाधिकारी पूंजीवादी घरानों ने दिया था तो देश के बाहर के स्तर पर विभिन्न साम्राज्यवादी देशों खासकर सं.रा. अमेरिका, ब्रिटेन व फ्रांस ने अपने-अपने कारणों से उसे फलने-फूलने का मौका दिया। सं.रा. अमेरिका के पूंजीपतियों ने फासीवादी जर्मनी व इटली से युद्ध के मैदान में उतरने के पहले तक वहां अच्छा-खासा पूंजी निवेश किया और जर्मनी-इटली के बड़े पूंजीपतियों के साथ मुनाफे बटोरे। यह निरा झूठ है कि यह मध्य वर्ग की क्रांति थी।

इन बातों के साथ जर्मनी में फासीवाद के उदय और विस्तार के कारणों को देखें जो साम्राज्यवाद के झूठे तर्कों की पोल खोलता है।

सन् 1929 में विश्व आर्थिक संकट फूट पड़ा। इस संकट ने जर्मनी को भी अपने आगोश में ले लिया। हिटलर के ऐसी स्थिति में सत्तारूढ़ होने और उसके पीछे के कारणों का 1938 में लिखी गयी 'सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी (बोल्शेविक) का इतिहास' में इन शब्दों में वर्णन मिलता है :

> "लेकिन, आर्थिक संकट ने सुदूर पूर्व में ही पूंजीवाद के अंतर्विरोधों को न बढ़ाया; उसने यूरोप में भी बढ़ाया। उद्योग धंधों और खेती के लम्बे संकट ने, भारी बेकारी ने और गरीब वर्गों की रोजी का दिन पर दिन ठिकाना न रहने से, मजदूरों और किसानों में असंतोष बढ़ता गया। मजदूर वर्ग के असंतोष ने क्रांतिकारी विरोध का रूप लिया। यह बात खास तौर से जर्मनी में हुई, जो आर्थिक रूप से युद्ध से, अंग्रेज और फ्रांसीसी पूंजीपतियों, विजेताओं को हर्जाना देने से और आर्थिक संकट से चूर हो गया था। जर्मन मजदूर वर्ग दुहरी गुलामी में तड़प रहा था, देशी और विदेशी, अंग्रेज और फ्रांसीसी पूंजीपतियों की गुलामी में। यह अंसतोष कितना बढ़ गया था, यह इस बात से जाहिर होता था कि सत्ता पर फासिस्ट अधिकार होने से पहले राइखस्टाग के चुनाव में जर्मन कम्युनिस्ट पार्टी को 60 लाख वोट मिले थे। जर्मन पूंजीपतियों ने देखा कि जर्मनी में जो पूंजीवादी स्वाधीनता कायम है, उससे उनका नुकसान हो सकता है और मजदूर वर्ग क्रांतिकारी आंदोलन को बढ़ाने के लिए इस स्वाधीनता का उपयोग कर सकता है। इसलिए, उन्होंने फैसला किया कि जर्मनी में पूंजीपतियों की सत्ता को बनाये रखने का एक ही तरीका है और वह यह कि पूंजीवादी स्वाधीनता खत्म कर दी जाये, राइखस्टाग को शून्य के बराबर कर दिया जाये, और एक आतंकवादी-राष्ट्रवादी तानाशाही कायम की जाये, जो मजदूर वर्ग का दमन कर सके और उन निम्न पूंजीवादियों को अपना आधार बनाये जो युद्ध में जर्मनी की हार का बदला लेना चाहते थे। और इसीलिए, उन्होंने फासिस्ट पार्टी का सत्ता सौंपी। जनता को धोखा देने के लिए यह पार्टी अपने को राष्ट्रीय समाजवादी पार्टी कहती थी। पूंजीपति अच्छी तरह जानते थे कि फासिस्ट पार्टी सबसे पहले उन साम्राज्यवादियों की प्रतिनिधि है जो सबसे प्रतिक्रियावादी और मजदूर वर्ग से शत्रुभाव रखने वाले हैं। दूसरे,

वे जानते थे कि बदला लेने वालों की यह सबसे खुली पार्टी है जो लाखों राष्ट्रवादी रुझान रखने वाले मध्यवित्त लोगों को बरगला सकती है। इस काम में, मजदूर वर्ग से गद्दारी करने वालों, जर्मन सोशल-डेमोक्रेटिक पार्टी के नेताओं ने उनकी मदद की और अपने समझौते की नीति से फासिस्ट वाद का रास्ता साफ कर दिया।

"ऐसी ही परिस्थिति में, जर्मन फासीवाद 1933 में सत्तारूढ़ हो सके।

"17वीं पार्टी कांग्रेस को अपनी रिपोर्ट देते हुए, कामरेड स्तालिन ने जर्मनी की घटनाओं का विश्लेषण करते हुए कहा था :

'जर्मनी में फासीवाद की जीत को मजदूर वर्ग की कमजोरी का चिह्न और सोशल-डेमोक्रेटिक पार्टी द्वारा, जिसने फासिस्टवाद का रास्ता साफ किया, मजदूर वर्ग के प्रति विश्वासधात का नतीजा ही न समझना चाहिए, उसे इस बात का चिह्न भी समझना चाहिए कि पूंजीपति अब पार्लियामेन्टशाही और पूंजीवादी जनतंत्र के पुराने तरीकों से राज्य न कर सकते थे, इसलिए उन्हें अपनी घरेलू नीति में राज करने के आतंकवादी तरीकों से काम लेना पड़ता है ... ...'

(स्तालिन, लेनिनवाद की मूल समस्याएं)'

"जर्मन फासिस्टों ने राइखस्टाग में आग लगा कर, निर्दयता से मजदूर वर्ग का दमन करके, उसके संगठन तोड़ कर और पूंजीवादी-जनवादी स्वाधीनता खत्म करके, अपनी घरेलू नीति का श्रीगणेश किया। उन्होंने लीग ऑफ नेशन्स से हटकर और यूरोप के राज्यों के सीमान्तों को जर्मनी के हित में बलपूर्वक संशोधित करने के लिए सरेआम युद्ध की तैयारी करके, अपनी वैदेशिक नीति का श्री गणेश किया।" (सो.सं. की कम्युनिस्ट पार्टी का इतिहास, पेज-363-364)

जर्मन फासीवाद इटली के फासीवाद से इस मामले में भिन्न था कि उसके केन्द्र में नस्ल का सिद्धान्त था। इसके तहत माना गया कि जर्मन नस्ल शुद्ध और आर्य नस्ल है। और इस नस्ल को ही दुनिया में शासन करने का अधिकार है। क्योंकि अब तक इस नस्ल के साथ अन्याय होता रहा था जिसे हिटलर "ऐतिहासिक अन्याय" की संज्ञा देता था जिसको समाप्त किया जाना चाहिए था। जर्मनी को न्याय तभी प्रदान होता जब उसे रहने के "जिंदा रहने लायक स्थान" (Living Space-Lebensraum) मिलेता। यह स्थान जर्मनी की आबादी, सेना के साथ यूरोप और उससे बाहर चाहिए था। यह स्थान जर्मन नस्ल को निम्न नस्लों खास कर यहूदियों को खत्म या खदेड़ कर, दूसरे देशों में रहने वाली जर्मन नस्ल को एकजुट कर और जर्मन राज्य का विस्तार कर हासिल होना था।

कम्युनिज्म विरोध, आक्रामक राष्ट्रवाद, सैन्यवाद और सर्वसत्तावाद आदि में यह इटली के फासीवाद के सदृश ही था। नस्लवादी घृणा का चरम रूप दूसरे विश्व युद्ध में तब सामने आया था जब जर्मन फासीवादियों ने पोलैण्ड में 'आउसविट्ज' जैसे कुख्यात यातना कैम्प बनाये जहां यहूदियों के साथ निर्मम अत्याचार किया गया। इस तरह के कैम्पों में उनसे पहले कठोर श्रम करवाया गया और उसके बाद गैस चैम्बरों में झोंक दिया गया। मानव द्वारा की गयी बर्बरता के ये चरम बिंदु बने। इन्हें 'होलोकास्ट' (Holocaust) या महाविध्वंस कहा गया।

1935 में इटली ने अपने साम्राज्यवादी मंसूबों को परवान चढ़ाते हुए अबीसीनिया (आज का इथियोपिया) पर कब्जा कर लिया। हिटलर ने वर्साई संधि की धज्जियां उड़ाते हुए इटली से भी कहीं अधिक गति से अपने मंसूबों को पूरा किया। उसने सबसे पहले ऑस्ट्रिया को हड़पा फिर चेकोस्लोवाकिया और फिर पोलैण्ड। 1941 आते-आते हिटलर ने फ्रांस, डेनमार्क, नॉर्वे, हॉलैण्ड, बुल्गारिया, रोमानिया, यूगोस्लाविया और ग्रीस पर कब्जा कर लिया। 22 जून 1941 को उसने सोवियत संघ पर हमला बोल दिया।

फासीवाद के खिलाफ कोमिंटर्न की भूमिका

तीसरे इंटरनेशनल कम्युनिस्ट इंटरनेशनल (संक्षेप में कोमिंटर्न) की फासीवाद के खिलाफ संघर्ष में महत्वपूर्ण भूमिका थी। कुछेक देशों के मामले में, फासीवाद विरोधी संघर्षों में कोमिंटर्न की नेतृत्वकारी और निर्णायक भूमिका थी। इसमें यूगोस्लाविया, पोलैण्ड, चेकोस्लोवाकिया आदि प्रमुख थे।

कोमिंटर्न की फासीवाद विरोधी संघर्ष में तीन तरह की भूमिकायें थीं पहली विचारधारात्मक, दूसरी सही कार्यनीति पेश करना, तीसरी जनगण को संगठित करना और नेतृत्व देना।

विचारधारात्मक स्तर पर कोमिंटर्न ने बोल्शेविक पार्टी और स्तालिन के नेतृत्व में फासीवाद के चरित्र, उसके जन्म व विकास को सही वैज्ञानिक ढंग से सूत्रित किया। उसकी वर्गीय अंतर्वस्तु को साम्राज्यवाद के घोर प्रतिक्रियावादी हिस्से की आतंकी तानाशाही कह के सही तौर पर स्पष्ट किया।

कोमिंटर्न ने यदि फासीवाद को सही ढंग से परिभाषित व सूत्रित नहीं किया होता तो दूसरे इंटरनेशनल की पार्टियों की तरह उससे जुड़ी पार्टियां भी इधर-उधर ढुलकती रहती और साम्राज्यवादी ताकतों के हाथ का खिलौना बन जाती।

सही विचारधारात्मक सूत्रीकरण का ही परिणाम था कि कोमिंटर्न फासीवाद के खिलाफ लड़ाई में सही कार्यनीति पेश कर सका व ठीक दिशा दे सका। कोमिंटर्न की सही कार्यनीति के कारण ही फासीवाद द्वारा कब्जा किये गये देशों में व्यापक फासीवाद विरोधी मोर्चे स्थापित हो सके। अपने देश की मुक्ति की लड़ाई में समाज के विभिन्न तबकों मजदूरों, किसानों शहरों के मध्यम तबकों और पूंजीपति वर्ग के एक हिस्से ने भाग लिया।

फासीवाद के विरुद्ध राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष में मुख्य भूमिका कम्युनिस्ट और मजदूर पार्टियों के नेतृत्व में मजदूर वर्ग ने निभायी। वित्तीय महाप्रभुओं, प्रतिक्रियावादी जमींदारों और हिटलर के साथ संश्रय करने वाले जैसे तत्वों को छोड़कर फासीवाद विरोधी संघर्ष

वास्तव में जनयुद्ध बन गया था। इन युद्धों के नेतृत्व के लिए कोमिंटर्न से जुड़ी हुई पार्टियों ने सभी फासीवाद विरोधियों और देशभक्तों को मिलाकर राष्ट्रीय मोर्चा, यूनान में राष्ट्रीय मुक्ति मोर्चा की स्थापना की। यूगोस्लाविया में एकीभूत लोक मुक्ति मोर्चों, की स्थापना की। यूगोस्लाविया में एकीभूत मोर्चा, फ्रांस में स्वाधीनता संग्राम का राष्ट्रीय मोर्चा, यूनान में राष्ट्रीय मुक्ति मोर्चा इत्यादि बनाये गये थे।

कोमिंटर्न की विचारधारात्मक व सही कार्यनीति के साथ व्यापक जनगण को राष्ट्रीय मोर्चों के तहत संगठित करने व नेतृत्व देने में तीसरी बड़ी भूमिका थी।

कोमिंटर्न की स्थापना सर्वहारा अंतर्राष्ट्रीयतावाद के सिद्धान्त का मूर्तरूप थी। 'दुनिया के मजदूरो एक हो' की भावना को अभिव्यक्त करने वाले कोमिंटर्न ने अपने जन्म के साथ दुनिया भर में कम्युनिस्ट पार्टियों के निर्माण और सर्वहारा आंदोलन को विकसित व मजबूत करने में योगदान दिया था। यही कारण था कि कोमिंटर्न अपने जन्म के समय से ही विश्व साम्राज्यवाद की आंखों में खटकने लगा। उन्हें भय था कि सोवियत संघ की तरह कई अन्य देशों में शीघ्र ही समाजवाद कायम हो जायेगा।

कोमिंटर्न ने फासीवाद के खतरे को इटली में मुसोलिनी के काबिज होने के साथ ही पहचान लिया था। 1922 में हुयी चौथी कांग्रेस में ही उसने फासीवाद के खिलाफ लड़ने के रणकौशल पर जोर दिया था।

कोमिंटर्न की छठी कांग्रेस जुलाई 1928 में ऐसे मौके पर हुयी थी जब विश्व पूंजीवाद का आर्थिक संकट अपनी गंभीर स्थिति की ओर बढ़ रहा था।

कोमिंटर्न की सातवीं कांग्रेस का फासीवाद के खिलाफ सही कार्यनीति तय करने में सबसे बड़ा महत्व है। यह कांग्रेस करीब एक माह (25जुलाई-21अगस्त 1935) मॉस्को में चली थी। इस कांग्रेस में ही फासीवाद विरोधी व्यापक संयुक्त मोर्चे की नीति पेश की गयी थी।

कोमिंटर्न की फासीवाद विरोधी लोकप्रिय संयुक्त मोर्चे की नीति का व्यापक असर पड़ना शुरू हो गया था। इस बात को सर्वहारा और उसके मित्र वर्गों ने ही नहीं बल्कि दुश्मनों ने भी ढंग से समझ लिया था। और इसीलिए वे कोमिंटर्न के खिलाफ सीधे तौर पर उतर आये। पहले 1934 में जर्मनी और जापान और बार में 1936 में इटली के फासीवादी भी 'एण्टी कोमिंटर्न पैक्ट' के हिस्से बने। (आगे के पृष्ठों में इस पैक्ट के बारे में चर्चा की जायेगी।)

कोमिंटर्न ने अपने जीवनकाल में सोवियत संघ की रक्षा में, फासीवाद के खिलाफ संघर्ष में, युद्ध के खिलाफ विश्व के पैमाने पर क्रांतिकारी शक्तियों को एकजुट करने में ही नहीं भूमिका निभायी बल्कि उसने ऐसी क्रांतिकारी पार्टियों और नेताओं को भी तैयार किया जिन्होंने दुनिया के कई देशों में समाजवाद के निर्माण तथा राष्ट्रीय मुक्ति संघर्ष में नेतृत्व दिया।

कोमिंटर्न के बारे में क्योंकि पिछले अंक में विस्तार से चर्चा है अतः यहां हम विस्तार में नहीं जा रहे हैं। वहां कोमिंटर्न के संदर्भ में कम्युनिस्ट या वाम घेरे में उठाये जाने वाले सवालों का जवाब दिया जा चुका है। अंतर्राष्ट्रीय पैमाने पर जब विश्व युद्ध अपने भीषण अवस्था में था तथा दुनिया की स्थिति जटिल हो गयी थी तब कम्युनिस्ट इंटरनेशनल के संचालन में आ रही दुस्वारियों की वजह से उसे भंग किया गया था। लेकिन अपने भंग होने से पहले तक कोमिंटर्न अपनी ऐतिहासिक भूमिका खासकर फासीवाद विरोधी संघर्ष में बखूबी निभा चुका था।

कोमिंटर्न का इतिहास और उसके द्वारा फासीवाद के खिलाफ किये गये विचारधारात्मक संघर्ष, अपनायी गयी कार्यनीति व दिशा का महत्व आज भी लगातार बना हुआ है। कोमिंटर्न के खिलाफ साम्राज्यवाद और फासीवाद के द्वारा खूब कुत्सा प्रचार किया गया। उसके ऊपर युद्ध को भड़काने आदि के लांछन लगाये गये। दुश्मनों द्वार किये जाने वाला कुत्सा प्रचार, लांछन, आरोप कोमिंटर्न के महत्व को अपने आप बता देते हैं।

IV

फासीवादी उभार व सोवियत समाजवाद के खिलाफ साजिश

फासीवाद के विकास को मोटे तौर पर दो चरणों में बांटा जा सकता है।

पहला चरण; प्रथम विश्व युद्ध के बाद से लेकर विश्व आर्थिक संकट की शुरूआत तक (1919-1929)।

दूसरा चरण; विश्व आर्थिक संकट से लेकर दूसरे विश्व युद्ध की समाप्ति तक (1929 - 1945)।

पहला चरण : इस चरण की शुरुआत मुख्यतः इटली से होती है। इटली में फासीवादी संगठन युद्ध के दौरान ही पैदा हो चुके थे। 1915 में पहला फासीवादी संगठन अस्तित्व में आ चुका था। 1922 में मुसोलिनी के सत्तारूढ़ होने से पूरे यूरोप में जगह-जगह फासीवादी संगठन अस्तित्व में आने लगे थे। फासीवाद इटली से शुरू होकर यूरोपीय परिघटना बनने लगा था। पूरे विश्व में इसका प्रभाव और प्रशंसक पैदा हो रहे थे परन्तु अभी यह मूलतः यूरोपीय परिघटना ही था। सोवियत संघ में समाजवाद की विजय के बाद पूरे विश्व में खासकर यूरोप में वित्तीय पूंजी इस नंगी तानाशाही को एक विकल्प के रूप में अपनाने की ओर बढ़ रही थी ताकि समाजवाद की चुनौती को खत्म कर सके और अपना विस्तार कर सके।

दूसरा चरण : 1929 में महामंदी (ग्रेट डिप्रेशन) के बाद दूसरे देश में फासीवादी सत्ताएं अस्तित्व में आने लगीं। साथ ही अब फासीवाद एक वैश्विक परिघटना बनती गयी। जर्मन फासीवाद ने जर्मनी में सत्ता पर कब्जा करने के चंद वर्षों के भीतर ही यूरोप में एक के बाद एक देश को निगलना शुरू कर दिया। यह काल तब तक चला जब तक निर्णायक तौर पर फासीवाद को शिकस्त नहीं दे दी गयी। सोवियत समाजवाद ने इसमे प्रमुख भूमिका निभायी। इस दौर की समाप्ति के बाद उदारवादी पूंजीवादी सत्ताओं के साथ कई देशों में समाजवादी राज भी कायम हुए।

कम्युनिस्ट इंटरनेशनल के द्वारा फासीवाद के बारे में किये गये सही सूत्रीकरण और अभी की गयी चर्चा से स्पष्ट है कि फासीवाद का मुख्य लक्ष्य मजदूर वर्ग से मिल रही क्रांतिकारी चुनौती को समाप्त करना था। फासीवाद, जो कि वित्तीय पूंजी की आतंकवादी तानाशाही है, अस्तित्व में आती ही तब है जब किसी देश में क्रांतिकारी संकट मौजूद होता है। इस संकट के समय जहां जनता खासकर मजदूर वर्ग का रोष पूंजी की सामान्य तानाशाही के खिलाफ फूट रहा होता है। ऐसे वक्त में खासकर सबसे प्रतिक्रियावादी हिस्सा असामान्य तानाशाही या आतंकवादी तानाशाही अर्थात फासीवाद की ओर बढ़ता है। और जैसे ही वह अपने देश के भीतर आतंकवादी तानाशाही कायम कर लेता है वैसे ही वह वित्तीय पूंजी की राक्षसी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए भौगोलिक विस्तार की ओर जाता है। जैसे इटली ने अबीसीनिया पर आक्रमण के द्वारा, फासीवादी जर्मनी ने आस्ट्रिया, चेकोस्लोवाकिया आदि को हड़प कर साबित किया। भौगोलिक विस्तार सैन्य आक्रमण और युद्ध के जरिये किया जाता है।

युद्ध आंतरिक आतंकवादी तानाशाही को भले ढंग से साधता है। युद्ध अंधराष्ट्रवाद, नस्लवाद की भावनाओं की मालिश करता है। उन्हें उग्र कर और बर्बरता की ऊंचाई तक ले जाता है। ऐसे कातिल तैयार करता है जो हजारों, लाखों का कत्ल करने में तनिक भी नहीं हिचकिचाते है बल्कि गौरवान्वित महसूस करते हैं। कातिल राष्ट्रीय गौरव के प्रतीक बन जाते हैं। साम्राज्य का विस्तार और तेजी से विस्तार फासीवाद अपना चुकी वित्तीय पूंजी के राज्य की अनिवार्य व जिंदा रहने की शर्त बन जाता है। ऐसे में वह उन्हें भी अपने आगोश में ले लेता है जो उसे संरक्षण, सहयोग दे रहे होते हैं या उसके प्रति ऊहापोह का भाव रख रहे होते हैं। जो यह भूल कर रहे होते हैं कि फासीवाद की जब भूख शांत हो जायेगी, जब वह समाजवाद को निगल लेगा तब उससे सुलह-समझौते कर लेंगे या अपनी ताकत के दम पर निपट लेंगे। हिटलर ने फ्रांस व ब्रिटेन के साथ वही किया जिसकी आशा उन्हें नहीं थी। वे तो उस समय की प्रतीक्षा कर रहे थे जब हिटलर सोवियत संघ पर कब्जा कर लेता। फ्रांसीसी, ब्रिटिश व संयुक्त राज्य अमेरिका के साम्राज्यवादी तो फासीवाद के जरिये सोवियत समाजवाद को खत्म करने का मंसूबा लम्बे समय से पाल रहे थे। पूरे तीस के दशक में यही उनकी रणनीति थी। 22 जून 1941 को उसने सोवियत संघ पर हमला तो किया लेकिन उसके पहले वह फ्रांस, डेनमार्क, नार्वे, हालैण्ड आदि को हड़प चुका था। ब्रिटेन के होश ठिकाने लगा चुका था। जापानी साम्राज्यवादियों ने अमेरिका के पर्लहार्बर पर 7 दिसम्बर 1941 को हमला बोल दिया था। इस तरह अमेरिकी साम्राज्यवादियों को दूसरे विश्व युद्ध में उतरना पड़ा। अभी तक तो वे इससे आग सेक रहे थे। युद्ध से मोटा लाभ कमा रहे थे। अमेरिका के हथियार उद्योग जर्मन फासीवादियों को हथियार बेच रहे थे।

साम्राज्यवादी फासीवादी दैत्य रोज-रोज हजारों लोगों की बलि ले रहा था। इस विशाल दैत्य को काबू करना अब अमेरिकी या ब्रिटिश साम्राज्यवादियों के वश में नहीं था। इसे कोई धूल चटा सकता था तो वह था सिर्फ और सिर्फ सोवियत समाजवाद और उसके साथ खड़े करोड़ों मजदूर, किसान, बुद्धिजीवी और अन्य मेहनतकश-उत्पीड़ित जन।

सोवियत संघ ने कैसे फासीवाद को शिकस्त दी, उसको धूल-धूसरित किया इस विषस पर चर्चा से पहले इस विषय पर आयें कि सोवियत समाजवाद के खिलाफ कैसे-कैसे षड्यंत्र साम्राज्यवादी देश ओर उनके पाले-पोसे सोवियत समाज के गद्दार कर रहे थे। कैसे-कैसे षड्यंत्र सोवियत संघ में समाजवाद को खत्म करने के लिए रचे गये।

यहां हम उन बातों के विस्तार में नहीं जायेंगे जो इससे पहले 'लाल सलाम' के अंक 33 व 34में 'सोवियत संघ में समाजवाद का निर्माण' 'सोवियत समाजवाद -एक प्रति आलोचना' व 'स्तालिनः महान सर्वहारा शिक्षक व नेता' नामक लेखों में की जा चुकी हैं। यहां उन बातों को पुनर्स्मरण कराने के लिए ही जिक्र किया जा रहा है।

'महान अक्टूबर समाजवादी क्रांति' ठीक उस समय घटी थी जब अभी साम्राज्यवादी लुटेरों के बीच पहला विश्व युद्ध पूरे जोरों पर था। उस समय सत्ता से बेदखल किये गये जमींदारों और पूंजीपतियों ने सोवियत सत्ता का तख्ता उलटने के लिए फ्रांसीसी, ब्रिटिश, अमेरिकी व जापानी साम्राज्यवादियों आदि के साथ मिल कर षड्यंत्र रचा और आक्रमण किया। बगावत, साम्राज्यवादी हस्तक्षेप व आक्रमण का यह दौर 1918 से 1922 तक जारी रहा।

प्रत्यक्ष हस्तक्षेप का यह दौर बीत जाने के बाद सोवियत सत्ता के खिलाफ एक नयी तरह की लड़ाई शुरू हुयी। जासूसों को भेजना और ऐसी कार्यवाहियों को उनके मार्फत अंजाम देना जिससे समाजवादी निर्माण के काम में अड़ंगा लगे और सोवियत सत्ता दुनिया में अलग-थलग पड़ जाये, औद्योगीकरण की रफ्तार धीमी हो और कृषि सामूहिकीकरण की योजनाएं ध्वस्त हो जायें। उनकी यह उम्मीद टूटती जा रही थी कि सोवियत सत्ता चंद सालों में खुद ब खुद बिखर जायेगी।

1946 में दो अमेरिकी लेखकों सेयर्स और कान ने 'रूस के खिलाफ महाषड्यंत्र' (The Great conspiracy against Russia) नाम से एक किताब लिखी थी। इस किताब की खास बात यह थी कि यह तथ्यों और प्रमाणिक दस्तावेजों के आधार पर लिखी गयी थी। यह किताब विस्तार से यह बताती थी कि सोवियत संघ में कैसे पांचवे दस्ते (फिफ्थ कालम) के निर्माण का प्रयास तीस के दशक में किया गया और वह कैसे ध्वस्त हो गया। आगे के पृष्ठों में इसकी चर्चा की गयी है।

त्रात्स्की और उसके सहयोगियों का गुट सोवियत संघ में हिटलर के पांचवें कालम का महत्वपूर्ण हिस्सा था।

22 जनवरी, 1929 को त्रात्स्की को सोवियत संघ से पूर्णतया निष्कासित कर दिया गया। उसके पहले उसे 1927 में पार्टी से निकाल कर 1928 के अंत तक अल्मा अता में रखा गया था। त्रात्स्की के सोवियत राज्य के खिलाफ काले कारनामों को इस तरह से दो हिस्सों में बांटा जा सकता है। पहला सोवियत संघ से निकाले जाने से पूर्व की गतिविधियां और दूसरा उसके बाद की गतिविधियां

यहां हमारा इरादा त्रात्स्की के विचारों, सिद्धान्तों आदि पर कोई टिप्पणी का इसलिए नहीं है क्योंकि इस पत्रिका के अंक-12 (वर्ष 2006) में विशेष आलेख 'ट्राट्स्कीवाद : एक निम्न बुर्जुआ क्रांति विरोधी विचारधारा' नाम से पहले ही प्रकाशित हो चुका है।

1927 में पार्टी से निकाले जाने के बाद त्रात्स्की के वे मंसूबे धरे के धरे रह गये थे जिसके अनुसार वह अंतः पार्टी संघर्ष में सफलता हासिल कर के पहले बोल्शेविक पार्टी और फिर राज्य पर कब्जा कर लेता। इसमें उसे जब सफलता नहीं मिली तो उसने गुप्त तौर-तरीके अपना कर सोवियत राज्य के खिलाफ नये षड्यंत्र रचने शुरू कर दिये। अल्मा अता जो कि साइबेरिया में स्थित कजाक सोवियत गणराज्य की राजधानी थी में रहते हुए उसने एक गुप्त सोवियत राज्य विरोधी हेडक्वार्टर कायम कर लिया था। जहां से वह निरंतर सोवियत राज्य व बोल्शेविक पार्टी में मौजूद पार्टी व सर्वहारा विरोधी तत्वों को निर्देश देता और तोड़-फोड़ की गतिविधियों को संचालित करता था। और उसके पास निरन्तर ऐसे तत्वों से सूचनाएं और रिपोर्ट आती रहती थी। इस काम में त्रात्स्की का बेटा लेव सेदोव मदद करता था। त्रात्स्की ने अपने बेटे के कारनामों का 'पुत्र-मित्र योद्धा' कहकर महिमामण्डन किया हुआ है। त्रात्स्की की हरकतें जब हद से ज्यादा गुजर गयी तब उसे सोवियत संघ से निष्कासित करना पड़ा। त्रात्स्की ने जर्मन साम्राज्यवादियों के एजेण्टों खासकर सैन्य एजेण्टों से गुप्त सम्बन्ध कायम किये हुए थे। ऐसा उसने पार्टी और सोवियत सत्ता में रहते हुए ही करना शुरू कर दिया था। इसका वर्णन पूर्व में उद्धृत पुस्तक 'रूस के खिलाफ महाषड्यंत्र' में तथ्यों सहित किया है। और खुद त्रात्स्की की रचनाओं में इसके पर्याप्त प्रमाण हैं। अपने पुत्र लेव सेदोव की प्रशंसा तो त्रात्स्की ने उसके गुप्त कारनामों में बढ़चढ़ कर भूमिका निभाने के कारण ही की है।

1929 में सोवियत संघ से निकाले जाने के बाद त्रात्स्की ने सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी और सोवियत सत्ता पर कब्जा करने के लिए साम्राज्यवादियों से एक तरह से संयुक्त मोर्चा कायम कर लिया। ऐसा करने में उसे किसी किस्म की दिक्कत नहीं थी। वामपंथी जुमलेबाजी में उस्ताद त्रात्स्की ने अपने घृणित मंसूबों और कारनामों को छुपाने के लिए इस कला का खूब प्रदर्शन किया। उसके बातों के कायल यूरोप में आम मजदूर से लेकर साम्राज्यवादी देशों के राजनीतिज्ञ तक थे। त्रात्स्की की अपनी जिंदगी पर लिखी किताब 'मेरा जीवन' (My life) हिटलर की 'माइन काम्फ' (मेरा संघर्ष) की तरह बहुप्रचारित किताब थी। इस किताब के प्रशंसकों में एक हिटलर भी था। इस किताब के बारे में सेयर्स और कान लिखते हैं,

> "त्रात्स्की की किताब तेजी से सोवियत विरोधी गुप्तचर सेवाओं के लिए पाठ्य पुस्तक (टेक्स्ट बुक) बन गयी। सोवियत सत्ता के खिलाफ प्रचार के लिए यह एक बुनियादी निर्देश (basic guide) के रूप में स्वीकार्य थी। जापान की सीक्रेट पुलिस ने जेल में बन्द जापानी और चीनी कम्युनिस्टों के लिए इसे आवश्यक कर दिया था ताकि उनके मनोबल को तोड़ा जा सके और उन्हें समझाया जा सके कि सोवियत रूस ने चीनी क्रांति के साथ और उस उद्देश्य के साथ दगा किया जिसके लिए वे लड़ रहे हैं। गेस्टापो ने भी इसी उद्देश्य के लिए इसका इस्तेमाल किया ... ..."। (पेज-74, वही अनुवाद हमारा)

त्रात्स्की ने सोवियत सत्ता, बोल्शेविक पार्टी और स्तालिन के खिलाफ कुत्सा प्रचार की बाढ़ ला दी। वह किसी से भी इस काम में मदद लेने को और गठबंधन करने को तैयार था। त्रात्स्की ने वाम लफ्फाजी से सजी अपनी बातों के जरिये साम्राज्यवादियों और सर्वहारा क्रांति के विरोधियों को एक से बढ़कर एक हथियार दे दिये।

1929 में सोवियत संघ से निकाले जाने के तुरन्त बाद त्रात्स्की जर्मन फासी वादियों से लेकर पश्चिमी साम्राज्यवादियों की आंखों का तारा बन गया। उसको हर तरह से मदद मुहैय्या करायी गयी। उसके काले कारनामों के लिए पैसा, व्यक्ति सब उपलब्ध कराये गये। उसकी सुरक्षा के पुख्ता बंदोबस्त किये गये। उसकी खर्चीली जिंदगी के लिए धन हर वक्त उपलब्ध रहा। वह चाहे तुर्की में रहा हो, या फ्रांस या जर्मनी या नॉर्वे या फिर मैक्सिको में रहा हो। त्रात्स्की ने न केवल सोवियत संघ के भीतर बल्कि बाहर भी ऐसा गिरोह बन लिया था जो निरंतर सोवियत सत्ता, बोल्शविक पार्टी और उसके नेताओं खासकर स्तालिन के प्रति कुत्सा प्रचार करता बल्कि उन्हें नुकसान पहुंचाने के लिए गुप्त और खुले तरीके अपनाता था। त्रात्स्की के अनुयाईयों ने सर्गेई किरोव से लेकर मैक्सिम गोर्की की हत्या की।

त्रात्स्की अपने निष्कासन के बाद से लेकर अपनी हत्या तक लगातार दो तरफा नीति पर कार्य कर रहा था। सोवियत संघ के भीतर लगातार सोवियत सत्ता को कमजोर करने खासकर सोवियत निर्माण से लेकर उसकी प्रतिरक्षा के काम में तोड़-फोड़ से लेकर जासूसी करना। अपने पूरे गिरोह को इस तरह से तैयार करना कि मौका मिलते ही सत्ता पर कब्जा किया जा सके। बाहर से सोवियत संघ पर फौजी हमले के लिए संभावना को तलाशना और ऐसी जो भी कार्यवाहियां हो रही थीं उनमें हर तरह से मदद करना। इस तरह से फौजी हमले के समय त्रात्स्की के सोवियत संघ के भीतर मौजूद गिरोह, जो कि 'पांचवे कालम' की भूमिका निभाता, पहले से ही तैयार था। समय बीतने के साथ त्रात्स्की को विश्वास हो गया था कि सोवियत संघ पर किया जाने वाला बाहरी हमला या युद्ध, उसे सत्ता तक अवश्य पहुंचा देगा। वह अपने चेलों को कभी जर्मन फासीवादियों से समझौते करने के लिए भेजता तो कभी जापानी सैन्य फासीवादियों के पास भेजता। जर्मन व जापानी फासीवादियों ने सोवियत सत्ता के खिलाफ कुत्सा प्रचार के लेकर सैन्य जानकारियों को हासिल करने में त्रात्स्की के विरोध का खूब इस्तेमाल किया। 1934 में जर्मनी और जापान ने एण्टी कोमिंटर्न पैक्ट कर लिया था।

त्रात्स्की ने साम्राज्यवादियों और फासीवादयों की मदद एक और ढंग से भी की। उसने सोवियत समाजवाद विरोधी प्रचार से दुनिया के कम्युनिस्टों और मजदूर आंदोलन में विचारधारात्मक विभ्रम से लेकर संशय के बीज बोये। बहुत कामयाबी तो इसमें त्रात्स्की को नहीं मिली परन्तु फिर भी नुकसान हुआ। इस काम में त्रात्स्कीपंथी आज भी लगे हुए हैं।

अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट संगठन (कोमिंटर्न या तीसरे इण्टरनेशनल) के खिलाफ जब जर्मन-जापान-इटली 'एण्टी कोमिंटर्न पैक्ट' कर रहे थे तब त्रात्स्की ने 1938 में 'चौथा इंटरनेशनल' बनाकर उनकी सीधे तौर पर मदद ही की थी।

'रूस के खिलाफ महाषड्यंत्र' में सेयर्स और कान ने त्रात्स्की के षड्यंत्रों को प्रमाणित दस्तावेजों के जरिये उजागर किया है। कुछ अंश देखने लायक हैं,

"अप्रैल 1934 में, एक सोवियत इंजीनियर जिसका नाम बायेरसिनोव था साइबेरिया स्थित कुजेन्स्तक कोयला खदान के निर्माण प्रमुख के दफ्तर में रिपोर्ट करने गया कि उसके विभाग में कुछ बहुत ही गलत हो रहा है। वहां बहुत सारी दुर्घटनाएं, भूमिगत आगजनी, यांत्रिक अवरोध हो रहे थे। बायेरसिनोव को तोड़-फोड़ की आशंका हुयी।

"निर्माण प्रमुख से बायेरसिनोव के इस जानकारी के लिए धन्यवाद दिया।

"मैं सही लोगों को सूचित कर दूंगा" उसने कहा "फिलवक्त इस बारे में किसी से कुछ न कहना'।

"निर्माण प्रमुख अलेक्सई शेस्तोव एक जर्मन जासूस और साइबेरिया में त्रात्स्कीवादी तोड़-फोड़ (sabotage) का प्रमुख संगठनकर्ता था।

"कुछ दिन बाद बायेरसिनोव एक खाई में मृत पाया गया। ग्रामीण क्षेत्र में एकान्त पट्टी में जब वह काम से घर जा रहा था एक तेज रफ्तार ट्रक ने उसे टक्कर मारी थी। इसका ड्राईवर एक पेशेवर आतंकवादी था जिसका नाम चेरेपुकिन था। शेस्तोव ने बायेरसिनोव की हत्या करने का काम उसे सौंपा था और इस काम के लिए 15000 रूबल दिये थे।" (पेज 84 अनुवाद हमारा)

ऐसी अनेकों घटनाएं बीस व खासकर तीस के दशक में तब तक घटती रही जब तक बड़े पैमाने पर सोवियत संघ में 'शुद्धिकरण' अभियान के तहत सफाई नहीं कर दी गयी।

एक अन्य उदाहरण जिसमें त्रात्स्की सोवियत नेताओं की हत्या की साजिश रच रहा था :

"1934 के पतझड़ से त्रात्स्कीवादियों और दक्षिणपंथी आतंकवादी गिरोह पूरे सोवियत संघ में सक्रिय थे। इस आतंकवादी गिरोह में पुराने समाजवादी क्रांतिकारी एक समय के मेंशेविक, पेशेवर हत्यारे और जारशाही की ओखराना (ochrana) के पूर्व एजेण्ट शामिल थे। उक्रेन, बेलोरूस, जॉर्जिया, अरमेनिया, उज्बेकिस्तान, अजरबेजान और सूदूर पूर्व के समुद्री क्षेत्र के सोवियत विरोधी राष्ट्रवादी और फासीवादी इस आतंकवादी औजार में भर्ती किये जाते थे। बहुत से स्थानों में नाजी और जापानी एजेण्ट इन गिरोहों की कार्यवाहियों को सीधे निर्देशित करते थे।

"सोवियत नेताओं की एक सूची तैयार की गयी जिनकी हत्या की जानी थी। सूची में सबसे पहला नाम जोसफ स्तालिन का था। अन्य नाम क्लेमेंती वोरोशिलोव, पी.एम. मालोतोव, सेर्गेई किरोव, लाजार कागनोविच, अंद्रेई ज्यादानोव, व्याचेसलेव मेंन्जिन्स्की, मैक्सिम गोर्की और वेलेरियन कुई विशेव थे।

"आतंकवादी समय समय पर त्रात्स्की से संदेश प्राप्त करते थे जिसमें सोवियत नेताओं की हत्या की आवश्यकता पर जोर होता था। एक ऐसा संदेश अक्टूबर 1934 में इफेरेम डेरिटजेट के पास पहुंचा जो कि त्रात्स्की का पूर्व में अंगरक्षक था। त्रात्स्की ने अदृश्य स्याही से जर्मन मोशन पिक्चर मैगजीन में लिख कर भेजा था। डेरिटजेट के पास यह मैगजीन उसकी बहन लायी थी जिसे यह मैगजीन वारसा में त्रात्स्की के एक पत्रवाहक ने दी थी। त्रात्स्की के डेरिटजेट के संदेश को पढ़िये:

"प्रिय मित्र, हमारे सामने आज निम्न कार्यभार हैं :

"1- स्तालिन और वोरोशिलोव को हटाना है।

2- सेना के भीतर एक नाभिक बनाने का काम करना है।

3- युद्ध के समय हर हार और संशय का लाभ उठाना है ताकि नेतृत्व हासिल किया जा सके।

"इस संदेश पर स्तारिक (Starik) ('वृद्ध आदमी') के दस्ताखत थे जो कि त्रात्स्की का गुप्त हस्ताक्षर था। (पृष्ठ 85, वही, अनुवाद हमारा)

इसके बाद सोवियत नेताओं पर कई हमले हुए और कई प्रमुख सोवियत नेता मारे गये। इन हत्याओं में कई बार ऐसे तरीके सामने आये जिनसे लगता था कि मृत्यु स्वाभाविक ढंग से या बीमारी के कारण हुयी है। जिन सोवियत नेताओं की हत्या त्रात्स्की गुट द्वारा षड्यंत्रकारी तरीके से अंजाम दी गयी उनमें सेर्गेई किरोव, मेन्जिन्स्की व मैक्सिम गोर्की प्रमुख थे।

सोवियत संघ में "पांचवां कालम" का ध्वंस

सोवियत संघ में काम करने वाला 'पांचवां कालम' ऐसे लोगों से मिलकर बना था जो सोवियत सत्ता, सोवियत समाजवाद, बोल्शेविक पार्टी के घोर विरोधी थे। इनमें जारशाही के जमाने के प्रतिक्रियावादी तत्वों जमींदार, पूंजीपति, फौजी अफसर, धनी किसान से लेकर समाजवादी क्रांतिकारी, मेंशेविक, त्रात्स्की-बुखारिन- कामेनेव-जिनोवियेव जैसे क्रांति विरोधी शामिल थे। विवरण से स्पष्ट है कि ये तत्व ब्रिटिश, फ्रांसीसी साम्राज्यवादियों से लेकर जर्मन-जापानी फासीवादियों के साथ गठजोड़ किये हुए थे।

ये यूरोप के विभिन्न देशों में कायम किये "पांचवें कालम" से इस मामले में भिन्न थे कि इनमें से अधिकांश की विचारधारा घोषित तौर पर फासीवादी, नस्लवादी नहीं थी। ज्यादा से ज्यादा जारशाही के जमाने के घोर प्रतिक्रियावादी ही नस्लवादी और यहूदी विरोधी विचार रखते थे।

सोवियत समाज और सत्ता को यह बहुत ज्यादा नुकसान पहुंचा पाते उसके पहले ही इनके कारनामे उजागर हो गये। सेर्गेई किरोव की हत्या ने पूरे सोवियत समाज और राज्य को इनके प्रति सचेत और जागरूक कर दिया।

इस 'पांचवें कालम' की मुख्य कमजोरी यह थी कि इसका सोवियत समाज में कोई व्यापक सामाजिक आधार न था। सोवियत संघ तेजी से समाजवाद की ओर बढ़ रहा था और समाज में पुराने वर्गों का आधार खिसक रहा था। इस रूप में 'पांचवां कालम' कमजोर हो रहा था हालांकि इसके नये सदस्य पुरानी जमीन से नहीं नयी जमीन से भी पैदा हो रहे थे। आज हम सोवियत संघ में हुयी पूंजीवादी पुनर्स्थापना के बारे में महान सर्वहारा नेता माओ के सही और वैज्ञानिक विश्लेषण से इस बात को जानते हैं कि क्यों ऐसा हो रहा था तथा कहां स्तालिन से और बोल्शेविक पार्टी से भूलें-गलतियां हो गयी थीं और उनका आधार कहां था।

"पांचवें कालम" के ध्वंस में 1936 से चले शुद्धीकरण अभियान का भारी महत्व है। यदि यह अभियान नहीं चला होता तो हिटलर अपने फासीवादी मंसूबों में आसानी से कामयाब हो जाता। 1936-38 के दौर में चले अभियान के बारे में 'लाल सलाम' के पिछले अंक में पर्याप्त बात की जा चुकी है। अतः यहां उन बातों को का दोहराव ही होगा।

इस विषय में अन्ना लुई स्ट्रांग ने लिखा था,

> "आखिरकार दूसरा विश्वयुद्ध रूस में आ पहुंचा। और तब दुनिया को इस बात पर गौर करना पड़ा कि हिटलर के जिस कुख्यात पांचवें दस्ते ने यूरोप की ज्यादातर सरकारों को उखाड़ फेंका था। उसकी मौजूदगी रूस में बहुत कम रह गयी थी। हावर्ड के स्मिथ की टिप्पणी थी कि 'अगर रूस के कुछ हजार नौकरशाहों और अफसरों का सफाया नहीं किया गया होता तो यह बात कमोबेश तय थी कि लाल सेना दो महीनों के अंदर धराशायी हो जाती" (अन्ना लुई स्ट्रांग, स्तालिन युग, वही, पेज 91)

बोल्शेविक पार्टी के इतिहास में "पांचवें कालम" शब्द का प्रयोग नहीं है परन्तु इस संदर्भ में जो बातें लिखी हैं, वे उल्लेखनीय हैं,

> "मुकदमों से पता चला कि त्रात्स्की-बुखारिन गुट के इन राक्षसों ने अपने मालिकों-विदेशी रियासतों के जासूस-विभागों-की आज्ञा से पार्टी और सोवियत राज्य का नाश करने का बीड़ा उठाया था : देश की सुरक्षा-शक्ति को कमजोर करने, विदेशी सैनिक हस्तक्षेप की सहायता करने, लाल फौज की हार के लिए रास्ता साफ करने, सोवियत संघ का विभाजन करने, जापानियों को सोवियत समुद्री इलाका देने, पोलों को सोवियत बेलोरूसिया और जर्मनों को सोवियत उक्रेन देने, मजदूरों और पंचायती किसानों की सफलतायें मिटाने और सेावियत संघ में पूंजीवादी गुलामी बहाल करने का बीड़ा उठाया था।
>
> "ये पिद्दी जैसे गद्दार, जिनकी ताकत चींटी से ज्यादा न थी, वह समझ बैठे कि वे देश के मालिक हैं और ख्वाब देखने लगे कि उक्रेन, बेलोरूसिया और समुद्री इलाका बेचना, या देना सचमुच इनके हाथ में है।
>
> "ये गद्दार कीड़े भूल गये थे कि सोवियत देश की सच्ची मालिक सोवियत जनता है, और उसने इन राईकोवों, बुखारिनों, जिनोवियेवों और कामेनेवों को राज्य के केवल अस्थायी कर्मचारी ही बनाया है, जिन्हें किसी भी समय वह अपने दफ्तरों से कूड़े के ढेर की तरह बाहर फेंक सकती है।
>
> "फासिस्टों के यह घृणित चाकर भूल गये थे कि सोवियत जनता के सिर्फ उंगली भर उठाने की देर है और इनका कहीं निशान बाकी नहीं रहेगा।" (पेज 417-418 सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी का इतिहास, वही)

1938 में लिखी गयी 'सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी के इतिहास' में ठीक ही लिखा था कि सोवियत देश की सच्ची मालिक सोवियत जनता है। और यह उसे उन सारे देशों से अलग कर देती थी जहां हिटलर ने हमले किये और तुरंत ही जीत हासिल कर ली। सोवियत संघ में क्योंकि जनता ही देश की मालिक थी इसलिए उसने फासीवादियों से इंच-इंच की लड़ाई लड़ी और अंततः उसका नामोनिशान मिटा दिया।

आगे इस विषय पर चर्चा करें कि सोवियत संघ पर हमले के लिए साम्राज्यवादी खासकर फासिस्ट क्या कर रहे थे।

एण्टी कोमिंटर्न पैक्ट

'लाल सलाम' के पिछले अंक (अंक 34, जनवरी 1917) में विस्तार पूर्वक बताया गया था कि किस तरह से लेनिन और बोल्शेविक पार्टी के नेतृत्व में तीसरे इंटरनेशनल (कोमिंटर्न) का गठन हुआ और किस तरह से उसने पूरी दुनिया में कम्युनिस्ट पार्टियों के गठन व क्रांति के कार्य को आगे बढ़ाया था। और, कैसे अपने भंग होने (8 जून, 1843) तक उसने फासीवाद विरोधी संघर्षों को नेतृत्व व दिशा दी, क्रांतियों का मार्गदर्शन किया और राष्ट्रीय मुक्ति की लड़ाई को दिशा दी।

कम्युनिस्ट इंटरनेशनल अपने जन्म के समय (मार्च, 1919) से ही साम्राज्यवादियों की आंखों में खटक रहा था। वे कम्युनिस्ट पार्टियों का नाश करने के लिए एड़ी-चोटी का जोर लगा देते थे। यहां हम इस सबके विस्तार में नहीं जा रहे हैं। पिछले अंक में इसके बारे में पर्याप्त चर्चा है। यहां पर हम इस बात पर चर्चा करेंगे कि किस तरह से फासीवादी देश सोवियत संघ, कम्युनिस्ट पार्टी व मजदूर आंदोलन को नष्ट करने के लिए एकजुट हो रहे थे।

जनवरी, 1933 में हिटलर जर्मनी का चांसलर बनता है। चांसलर बनते ही हिटलर नाजी पार्टी का एकछत्र शासन कायम करने के लिए जर्मनी की कम्युनिस्ट पार्टी और क्रांतिकारी शक्तियों के साथ-साथ सभी दूसरी पार्टियों को अपने निशाने पर ले लेता है। और इसी काम को दुनिया के पैमाने पर करने खासतौर पर सोवियत संघ को घेरने के लिए वह 1934 में जापानी साम्राज्यवादियों के साथ मिलकर 'एण्टी कोमिंटर्न पैक्ट' (कोमिंटर्न विरोधी समझौता) करता है। इस पैक्ट का मकसद सोवियत संघ पर विचारधारात्मक हमले से लेकर सैन्य घेराबंदी तक शामिल था। जैसा कि बताया जा चुका है कि किस तरह सोवियत संघ में संभावित "पांचवां कालम" इस काम में इन दोनों साम्राज्यवादियों के लिए उपयोगी होता। इनके विचारधारात्मक प्रचार की सामग्री का एक बड़ा हिस्सा त्रात्स्की से हासिल होता था।

अभी तक विश्व फासीवादी आंदोलन का नेता मुसोलिनी बना हुआ था परन्तु हिटलर ने तेजी से और खास तौर पर ऑस्ट्रिया पर कब्जा करके मुसोलिनी को अपना नेतृत्व स्वीकार करने को एक तरह से बाध्य कर दिया। नवम्बर 1936 में इटली भी एण्टी कोमिंटर्न पैक्ट' में शामिल हो गया। इस तरह 1936 तक सोवियत संघ की सैन्य घेराबंदी और घृणित विचारधारात्मक प्रचार और तेज हो गया। 1939 में हंगरी भी इस पैक्ट में शामिल हो गया। हंगरी ने जून 1941 में सोवियत संघ पर हमले के समय जर्मनी फासीवादियों का खूब साथ दिया। हंगरी को इसकी भारी कीमत चुकानी पड़ी। 1 करोड़ की जनसंख्या वाले देश में इस विश्व युद्ध में मारे गये लोगों की संख्या लगभग दस लाख थी जिसमें 1,40,000 सैनिक, 280,000 नागरिक और साढ़े पांच लाख यहूदी थे।

इस 'एण्टी कोमिंटर्न पैक्ट' का पश्चिमी साम्राज्यवादी देशों फ्रांस, ग्रेट ब्रिटेन व सं.रा. अमेरिका ने मौन साधकर साथ दिया। यह उनके मंसूबों के अनुरूप ही था।

V

सोवियत संघ की युद्ध के खिलाफ तैयारियां

कुछ विवादास्पद प्रश्न

सितम्बर 1934, में सोवियत संघ राष्ट्र संघ (लीग ऑफ नेशंस) का सदस्य बना। सोवियत संघ के राष्ट्र संघ के सदस्य बनने के साथ जर्मनी और जापान इस संघ से बाहर हो गये। ऐसा करके जर्मनी और जापान ने अपने इरादे स्पष्ट कर दिये। संघ से बाहर होने के साथ ही उन्होंने 'एण्टी कोमिंटर्न पैक्ट' कर लिया। इस तरह से वे अपने आपको सोवियत संघ के खिलाफ लड़ने के लिए तैयार कर रहे थे।

ठीक इसी समय सोवियत संघ दुनिया में संभावित नये विश्व युद्ध और खासतौर से फासीवाद के बढ़ते प्रभाव के खिलाफ, 'अंतर्राष्ट्रीय फासीवाद विरोधी मोर्चा' का प्रस्ताव, ब्रिटेन, फ्रांस और संयुक्त राज्य अमेरिका से रखता है। वे इस प्रस्ताव को ठुकरा देते हैं। वे न केवल प्रस्ताव को ठुकराते हैं बल्कि जर्मनी, जापान और इटली के फासीवादी मंसूबों को परवान चढ़ाने के लिए प्रत्यक्ष-अप्रत्यक्ष मदद करते हैं।

सोवियत संघ अपने शांति प्रस्तावों को लगातार आगे बढ़ाता है। शांति का महत्व सोवियत संघ की पार्टी और जनता से ज्यादा कौन समझ सकता था। पहले विश्व युद्ध के समय रूस में जब 'महान अक्टूबर समाजवादी क्रांति' घटी थी उसकी पहली मांग ही शांति की थी। और क्रांति होते ही रूस ने अपने आपको पहले विश्व युद्ध से अलग कर लिया था।

मई, 1934 में भी सोवियत संघ ने, राष्ट्र संघ के सदस्य बनने से पहले निरस्त्रीकरण सम्मेलन में प्रस्ताव रखा था कि इस सम्मेलन को 'स्थायी शांति सम्मेलन' में तब्दील कर दिया जाय। लेकिन साम्राज्यवादी लुटेरों ने शांति की सोवियत संघ की आवाज को अनसुना कर दिया। वे सोवियत संघ की शांति अपील को उसकी कमजोरी की निशानी समझते थे। काफी कवायद के बाद ही 1935 में फ्रांस और चेकोस्लोवाकिया के साथ फासीवादी आक्रमण के खिलाफ परस्पर सहायता की संधियां हो सकीं।

बढ़ते फासीवादी खतरे के मद्देनजर तीसरे कम्युनिस्ट इंटरनेशनल ने दूसरे इंटरनेशनल के सामने संयुक्त मोर्चा का प्रस्ताव रखा ताकि फासीवाद को चुनौती दी जा सके। ऐसे ही प्रस्ताव रेड इंटरनेशनल लेबर यूनियन ने दूसरे इंटरनेशनल से जुड़े मजदूर यूनियनों के संगठन आई.एफ.टी.यू. के सामने भी रखे। लेकिन ये मोर्चे उस वक्त बन न सके।

ऐसे समय में, जब फासीवादी आंदोलन तेजी से फैल रहा था और हिटलर अपनी ताकत तेजी से बटोर रहा था, जब ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे देश किसी फासीवाद विरोधी मोर्चे के गठन में कोई रुचि नहीं दिखा रहे थे तब उस वक्त मॉस्को में कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की सातवीं कांग्रेस (25 जुलाई -21 अगस्त 1935) हुई। इस कांग्रेस का भारी महत्व है क्योंकि इसने फासीवाद विरोधी संघर्षों की नींव डाली और फासीवाद के आगे के विकास में अवरोध और बाद में शिकस्त की नींव डाली।

इस कांग्रेस में फासीवाद से लड़ने के लिए लोकप्रिय मोर्चे की नीति पेश की गयी। इस नीति के तहत कम्युनिस्टों को सामाजिक जनवादियों, किस्म किस्म के अराजकतावादियों से लेकर उदारवादी बुर्जुआ जनवादी तत्वों के साथ मिलकर लोकप्रिय फासीवाद विरोधी मोर्चा कायम करना था। 1934 में फ्रांस में एक ऐसा लोकप्रिय फासीवाद विरोधी मोर्चा कायम हो चुका था। और उसने फ्रांस में अप्रैल 1936 में सरकार तक गठित कर ली। हालांकि इस संयुक्त सरकार में कम्युनिस्टों को बाहर रखा गया।

सोवियत संघ इस समय भीतरघातियों की चुनौतियों से कैसे निपट रहा था इसे हम पहले ही देख आये हैं। यद्यपि साम्राज्यवादियों को उम्मीद नहीं थी कि सोवियत संघ फासीवाद के खिलाफ सशक्त चुनौती पेश कर सकेगा। वे समझते थे कि सोवियत संघ हिटलर के आक्रमण के समक्ष दो माह भी नहीं टिक सकेगा।

सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी और उनके नेताओं ने फासीवाद को उसके जन्म के साथ ही गंभीरता से लेना शुरू कर दिया था। समय-समय पर कम्युनिस्ट इंटरनेशनल के कांग्रेस और प्लेनम में इस संदर्भ में कही गयी बातें और नीतियां इसके प्रमाण है। खुद 'बोल्शेविक पार्टी के इतिहास' में भी इस बात के पर्याप्त प्रमाण मौजूद हैं कि वे किस तरह से फासीवाद के खतरे को देखते थे और समय रहते अपनी तैयारी कर रहे थे।

सोवियत संघ ने फासीवाद और संभावित हमले के खिलाफ अपनी लड़ाई को तीन स्तरों पर संगठित किया था।

(क) विचारधारात्मक व राजनीतिक स्तर;

(ख) सैन्य व प्रतिरक्षा स्तर पर;

(ग) उत्पादन

विचारधारात्मक व राजनैतिक स्तर पर तैयारी के तहत सोवियत संघ द्वारा फासीवाद के चरित्र और उसके मानवता विरोधी होने को बार-बार उद्घाटित किया गया। कोमिंटर्न ने समय रहते सभी को इसके विनाशक रूप से अवगत कराया और लोकप्रिय मोर्चा की नीति दी। साथ ही सोवियत संघ ने कोशिश की कि फासीवाद विरोधी मोर्चा कायम हो सके जो कि वास्तव में युद्ध की विभीषिका के बड़े दौर के गुजर जाने के बाद ही कायम हुआ।

सैन्य व प्रतिरक्षा स्तर पर सोवियत संघ ने अपनी सैन्य क्षमता को विकसित करने की समुचित तैयारी की और अपने देश की जनता को इसके लिए तैयार किया। प्रतिरक्षा के लिए उसने एक मजबूत सुरक्षा घेरा अपनी सीमाओं पर हिटलर के हमले से पहले तैयार कर लिया। इस घेरे को तैयार करने के लिए सोवियत संघ की कई लोगों द्वारा आलोचना की जाती है। फिनलैण्ड और पोलैण्ड के सवाल पर विरोधियों से लेकर कई भलेमानुष कम्युनिस्ट भी प्रश्न खड़े करते रहते हैं। इन सवालों पर आगे चर्चा करेंगे। इसी तरह कई लोगों को सोवियत संघ का हिटलर से किया गया अनाक्रमण समझौता, जो कि रणकौशलात्मक दृष्टि से अतीव महत्वपूर्ण था, नहीं सुहाता है। उनकी भली आत्मा इस समझौते के बारे में सुनकर व्यथित हो जाती है।

उत्पादन के स्तर पर सोवियत संघ ने अपने इतिहास से बहुत कुछ सीखा था। सोवियत संघ ने सैन्य दृष्टि से आवश्यक वस्तुओं से लेकर औद्योगिक व कृषि उत्पादन की तैयारी युद्ध के पूर्व ही कर ली थी। सीमावर्ती स्थलों से कल-कारखानों को महफूज स्थानों में स्थानान्तरित समय रहते कर दिया गया था। इस तैयारी का स्तर क्या रहा होगा इसका अंदाजा इस बात से भी लगाया जा सकता है कि भारी जन हानि व उत्पादन के साधनों के युद्ध में नष्ट होने के बावजूद सोवियत संघ चंद वर्षों में अपना पुनर्निर्माण कर युद्ध से पूर्व स्तर से आगे निकल चुका था। हिटलर सहित पश्चिमी साम्राज्यवादियों को युद्ध के पहले दिन से उम्मीद थी सोवियत संघ चंद महीने भी मैदान में टिक नहीं पायेगा। फ्रांस पर कब्जा करने के बाद हिटलर के हौसले सातवें आसमान पर थे।

पहले सोवियत संघ पर हिटलर के आक्रमण से पूर्व के घटनाक्रम पर थोड़ी सरसरी निगाह डाल लें। और फिर, उन प्रश्नों पर आयें जो समय-समय पर उठते रहते हैं।

दूसरे विश्व युद्ध की शुरुआत 1 सितम्बर 1939 से मानी जाती है। इस दिन फासीवादी जर्मनी ने पोलैण्ड पर हमला बोला था। हालांकि इसके पहले इटली इथियोपिया (अक्टूबर 1935) और जर्मनी ऑस्ट्रिया (मार्च 1938), चेकोस्लोवाकिया (मार्च 1939) में कब्जा कर चुका था। इसी तरह जापान ने मंचूरिया पर कब्जा कर लिया था।

पोलैण्ड पर हमले से लगभग एक माह पूर्व हिटलर ने सोवियत संघ से अनाक्रमण समझौते की पेशकश की। 23 अगस्त को सोवियत संघ और जर्मनी के बीच समझौते पर हस्ताक्षर हुए। संधि की दोनों की अपनी-अपनी वजहें थी।

हिटलर सोवियत संघ पर आक्रमण करने से पहले अपनी स्थिति और मजबूत कर लेना चाहता था। वर्ष 1940 का मध्य आते-आते जर्मनी ने यूरोप के कई देशों पर कब्जा कर लिया। इनमें से कुछ देश ऐसे थे जो साम्राज्यवादी ताकत बनते थे। नॉर्वे, डेनमार्क, बेल्जियम, नीदरलैण्ड और फ्रांस हिटलर के कब्जे में आ चुके थे। अल्बानिया पर कब्जा करने के बाद फासीवादी इटली ने वर्ष 1940 के अक्टूबर माह में ग्रीस पर हमला बोल दिया था। अप्रैल 1941 में जर्मनी ने यूगोस्लाविया और ग्रीस पर कब्जा कर लिया। इस सबके बाद 21जून 1941 में फासीवादी जर्मनी ने सोवियत संघ पर हमला बोल दिया। सोवियत संघ पर हमले के समय हिटलर ने दावा किया था कि यह दुनिया का सबसे बड़ा सैन्य अभियान है। सोवियत संघ की जनता ने अपने देश की रक्षा के लिए इसके साथ 'महान देशभक्तिपूर्ण युद्ध' से इसका जवाब दिया। 'महान देशभक्तिपूर्ण युद्ध' पर आने से पहले उन प्रश्नों का जवाब दें जो सोवियत संघ और जर्मनी के बीच की अनाक्रमण संधि, फिनलैण्ड और पोलैण्ड के संदर्भ में उठते है।

सोवियत संघ और जर्मनी के बीच समझौता

समाजवादी सोवियत संघ और फासीवादी जर्मनी के बीच हुआ अनाक्रमण समझौता कई किस्म के भ्रम और सवालों को जन्म दे देता है। इसका कारण यह है कि जब भी संदर्भ से काट कर, देश-काल परिस्थितियों को नजरअंदाज करके बात की जायेगी तो ऐसा होना लाजिमी है। यह उनके लिए लाजिमी है जो इतिहास से परिचित नहीं हैं। परन्तु जिनका मकसद ही भ्रम फैलाना और सर्वहारा वर्ग के, सोवियत संघ के इतिहास पर कीचड़ उछालना है उनको देश काल परिस्थिति से कुछ लेना देना भी नहीं है। वे सब कुछ जानकर भी ऐसा ही करेंगे।

सोवियत संघ को जर्मनी से समझौते की ओर धकेलने में अहम भूमिका ब्रिटिश, फ्रांसीसी और अमेरिकी साम्राज्यवादियों की है। वे सोवियत संघ के बार-बार जोर देने के बावजूद फासीवाद विरोधी मोर्चा बनाने को राजी नहीं हुए। उल्टे जर्मनी और इटली को एक के बाद एक छूटें देते रहे। और एक देश पर हिटलर के कब्जे के बाद मान लेते थे कि अब जर्मनी यहीं पर रुक जायेगा। जब हालात बद से बदतर होते गये और फ्रांस व ब्रिटेन की जनता का अपनी सरकारों पर दबाव पड़ा तब जाकर कहीं वे सोवियत संघ से वार्ता करने को राजी हुए।

ये वार्ताएं देश से शुरू की गईं और इनको ब्रिटेन व फ्रांस ने इस ढंग से संचालित किया कि कोई नतीजा ही न निकल सके। एक तरफ अपनी जनता को संतुष्ट करने और सोवियत संघ को वार्ता में उलझाकर ब्रिटेन के प्रधानमंत्री चेम्बरलेन एक चाल चल रहे थे तो दूसरी तरफ वह हिटलर के साथ समझौते की कोशिश कर रहे थे। जिस वक्त मॉस्को में वार्ता का खेल खेला जा रहा था ठीक उसी वक्त चेम्बरलेन ने 3 मई 1939 को ब्रिटिश संसद में घोषणा की कि वे हिटलर से अनाक्रमण संधि के लिए तैयार हैं। 5 मई को ब्रिटेन ने सोवियत संघ से सैनिक गठबंधन के प्रस्ताव को ठुकरा दिया। फिर जब दबाव ब्रिटेन की सरकार पर पड़ने लगा तो उसने फिर एक बार बातचीत का खेल शुरू किया परन्तु सब कुछ बेनतीजा रहा। इस बीच में पूरे यूरोप को स्पष्ट हो चुका था कि हिटलर, पोलैण्ड पर कब्जा करने की योजना पर कार्यवाही शुरू करने वाला है। ऐसी परिस्थिति में, सोवियत संघ और जर्मनी के बीच 23 अगस्त, 1939 को समझौता होता है।

इस समझौते के बारे में अमेरिकी पत्रकार अन्ना लुई स्ट्रांग ने लिखा है,

> "इसलिए सोवियत संघ को अपना फैसला करना पड़ा। हिटलर ने एक अनाक्रमण समझौते की पेशकश की थी। बाद में सोवियत संघ पर युद्ध की घोषणा करते समय उसने खुद यह बात स्वीकार भी की थी कि समझौते का अनुरोध उसी ने भेजा था। 23 अगस्त को सोवियत संघ और जर्मनी के बीच उस समझौते पर हस्ताक्षर हुए। यह वैसा कोई गठबंधन नहीं था जैसा प्रस्ताव सोवियत संघ ने ब्रिटेन और फ्रांस के सामने रखा था। यह सिर्फ उस तटस्थता को नए सिरे से दी गयी स्वीकृति थी जो सोवियत संघ और जर्मनी के बीच 1926 से ही चली आ रही थी और जो हिटलर के शासनकाल में भंग हो गयी थी। मोलोतोव ने रिपोर्ट पेश (सर्वोच्च सोवियत का अगस्त अधिवेशन-लाल सलाम) करते हुए कहा कि सोवियत संघ को समझौते पर इसलिए दस्तखत करने पड़े क्योंकि '(ब्रिटेन और फ्रांस के साथ) पारस्परिक सहयोग का कोई समझौता होने की कोई उम्मीद नहीं रह गई थी।" (पेज 100, 'स्तालिन युग' वही)

स्पष्ट है कि इस समझौते की पेशकश हिटलर ने की थी और सोवियत संघ ने ब्रिटेन और फ्रांस के निकृष्ट रुख के कारण इसे स्वीकारा था।

इस समझौते से सोवियत संघ को क्या लाभ मिला? यह तो पहले दिन से सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी और उसके नेता स्तालिन व सोवियत जनता को स्पष्ट था कि देर सबेर हिटलर सोवियत संघ पर हमला बोलेगा परन्तु इस समझौते ने युद्ध के खतरे को कुछ समय के लिए टाल दिया। सोवियत संघ को लगभग दो वर्ष का समय अपनी तैयारियों के लिए और मिल गया। ब्रिटिश और फ्रांसीसी साम्राज्यवादी सरकारों व शासक वर्ग का चरित्र जनता के सामने उजागर हो गया।

ब्रिटिश व फ्रांसीसी साम्राज्यवादी शासकों के चरित्र के उद्घाटन में आस्ट्रिया और चेकोस्लोवाकिया की घटनाओं का विशेष महत्व था। खासकर चेकोस्लोवाकिया की घटनाओं का। चेकोस्लोवाकिया ने सोवियत संघ (1935) से पहले फ्रांस के साथ (1924) युद्ध की अवस्था में परस्पर सहायता को लेकर समझौता किया हुआ था।

चेकोस्लोवाकिया के पास सुप्रशिक्षित सेना के अलावा मजबूत किले की भी व्यवस्था थी। नाजी जर्मनी के हमले के समय सोवियत संघ ने कई बार चेकोस्लोवाकिया की मदद की घोषणा की परन्तु ब्रिटिश व फ्रांसीसी साम्राज्यवादियों के दबाव में चेकोस्लोवाकिया की सरकार ने मदद ठुकरा दी। 'म्यूनिख समझौते' के तहत ब्रिटिश व फ्रांसीसी साम्राज्यवादियों जिन्हें अमेरिकी साम्राज्यवादियों का पूर्ण समर्थन प्राप्त था ने नाजी जर्मनी को चेक प्रदेश सुडेटनलैण्ड दे दिया गया। ब्रिटिश व फ्रांसीसी साम्राज्यवादियों ने ऐसा अपने 'अहस्तक्षेप' की नीति के तहत किया था। इस नीति के तहत वे हिटलर के कब्जा करने की कार्यवाहियों में कोई दखल नहीं देते थे। उसका कारण सीधा था। ब्रिटेन के प्रधानमंत्री चेम्बरलेन और फ्रांसीसी राष्ट्रपति देलादियेर चाहते थे कि हिटलर पूर्व की ओर सोवियत संघ की ओर बढ़े चेकोस्लोवाकिया को हिटलर के हवाले करने वाले ये साम्राज्यवादी तब बेहद आग बबूला हुए जब सोवियत संघ ने हिटलर द्वारा प्रस्तावित अनाक्रमण संधि पर हस्ताक्षर कर दिये।

इस संधि के बाद उन्होंने सोवियत संघ पर हमले की अपनी धार और तेज कर दी। उनकी सोवियत संघ को घेरने की आशाओं पर तुषारापात हो गया। यहां तक कि जर्मन साम्राज्यवादियों के एक दम निकट सहयोगी इटली और जापान भी इस संधि से असहज हो गये। जापानी मंत्रीमंडल का तो पतन तक हो गया था। सोवियत समाजवाद से उनकी घृणा बढ़ती ही जा रही थी।

इस संधि के चंद हफ्तों बाद ही हिटलर ने पोलैण्ड पर हमला कर दिया। पोलैण्ड को बांटने के लिए सोवियत संघ को 'सह-अपराधी' घोषित कर दिया गया। कुछ ने इस घटना के आधार पर सोवियत संघ को साम्राज्यवादी या विस्तारवादी कहना शुरू कर दिया। इन आरोपों में कुछ भी सच्चाई नहीं थी असल में वे खुद अब तक हिटलर को प्रश्रय दे रहे थे। उसके युद्ध उद्योगों में वे भारी निवेश किये हुए थे। 'पोलैण्ड के प्रश्न' पर आगे चर्चा है।

हिटलर ने अपने फासीवादी साम्राज्यवादी मंसूबों को पूरा करने में वास्तविक बाधक बनने वाली शक्ति सोवियत संघ को अपने से दूर रख पश्चिमी यूरोप के देशों पर एक-एक करके कब्जा कर लिया। यहां तक कि फ्रांस भी बच न सका। नॉर्वे, डेनमार्क, बेल्जियम, नीदरलैण्ड व फ्रांस आदि पर हिटलर ने इस समझौते के एक साल के भीतर ही कब्जा कर लिया। हिटलर की ताकत काफी बढ़ गयी और वह उन सब को भी भस्म करने की ओर बढ़ने लगा जो (साम्राज्यवादी देश) उसे पाल-पोस रहे थे। फ्रांस इसका सबसे बड़ा उदाहरण था।

फासीवाद विरोधी प्रचार रोकने का आरोप

सोवियत संघ और जर्मनी के बीच हुयी अनाक्रमण संधि के बाद सोवियत संघ ने फासीवाद विरोधी संघर्ष को रोक दिया था और इस तरह हिटलर को आगे बढ़ाने में योगदान दिया था। ऐसे आरोप पूंजीवादी दायरों से लेकर वाम दायरों तक लगाये जाते हैं।

आरोप लगाया जाता है कि सोवियत प्रेस ने नाजी जर्मनी को शांति की ख्वाहिश रखने वाले तथा फ्रांसीसी और ब्रिटिश सत्ताओं का साम्राज्यवादी और आक्रमणकारी के रूप में पेश किया।

अपनी पुस्तक 'सोवियत संघ में वर्ग संघर्ष, तीसरी अवधि 1930-1941' **(Class struggle in the USSR, third priod: 1930-1941 part 2: the Dominaters)** में चार्ल्स बेथेलहाइम ने एक पूरे अध्याय में ऐसे कई आरोप लगाये हैं। प्रावदा के अगस्त, सितम्बर, अक्टूबर 1939 से कई लेखों के हवाले से दावा किया गया है कि सोवियत संघ के नेताओं ने नाजीवादियों को सकारात्मक रूप में पेश किया और फ्रांस व ब्रिटेन को नकारात्मक ढंग से पेश किया। हिटलर के भाषणों को छापा और उसकी तारीफ की।

चार्ल्स बेथेलहाइम का तथ्यों का चयन मनमाना है और पूर्वाग्रह से युक्त है। वे इस संधि के महत्व को तनिक भी नहीं समझ पाते हैं कि किस तरह से इस संधि के जरिये सोवियत संघ ने फासीवाद विरोधी तैयारियों के लिए वक्त हासिल किया और किस तरह से फ्रांस और ब्रिटेन के साम्राज्यवादियों के मंसूबों को पलीता लगाया। और किस तरह से इनकी जनता के सामने इनके चरित्र को उद्घाटित किया। सोवियत संघ के फासीवाद विरोधी मोर्चा बनाने के प्रस्ताव को सबसे ज्यादा क्षति इन्हीं ताकतों ने पहुंचायी थी। हिटलर को ऑस्ट्रिया, चेकोस्लोवाकिया आदि पर कब्जा करने तक ये उसके खिलाफ मोर्चा खोलने को तैयार नहीं हुए। ब्रिटेन ने तब ही उसके खिलाफ मोर्चा खोला जब उसने पोलैण्ड पर भी कब्जा करना शुरू कर दिया।

चार्ल्स बेथेलहाइम जैसों की दिक्कत यह है कि वे कूटनीतिक व रणकौशलात्मक मामलों को कार्यनीति, राजनीति व विचारधारा से उलझा देते हैं। ये राज्यों के बीच चलने वाली रस्सा कस्सी से मनमाने निष्कर्ष निकाल कर अपने एजेण्डे को आगे बढ़ाते है। उस वक्त भी और आज भी इनका एक ही एजेण्डा है कि सोवियत समाजवाद की बस किसी तरह लानत मलामत की जाय।

सच्चाई यह है कि इस पूरे दौर में (23 अगस्त 1939 से 23 जून 1941) सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी ने पूरे जोर-शोर से फासीवाद के संभावित हमले के खिलाफ तैयारी की। आगे हम इस पर चर्चा करेंगे। साथ ही कोमिंटर्न ने इस पूरे दौर में फासीवाद विरोधी शक्तियों और संगठनों को एकजुट करने में पूरा जोर लगा दिया था। और यह संघर्ष उन्हीं देशों में जहां फासीवादी जर्मनी, इटली और जापान ने कब्जा कर लिया था बल्कि स्वयं इन देशों के भीतर भी संगठित किया जा रहा था।

जून 1940 व मई 1941 में इतालवी कम्युनिस्ट पार्टी ने फासीवादी अत्याचार के खिलाफ एकजुट होने के आह्वान के साथ लगातार इस हेतु कार्य किया। 15 मई 1941 करे फ्रांसीसी कम्युनिस्ट पार्टी ने कोर्मिटर्न की लाइन के तहत राष्ट्रीय मोर्चे का निर्माण किया। इस मोर्चे में मजदूर, किसान, दस्तकार, व्यापारी, बुद्धिजीवी, पादरी सभी शामिल थे।

ऐसे ही फासीवाद विरोधी मोर्चे इसी दौरान नॉर्वे, बेल्जियम, हॉलैण्ड, डेनमार्क आदि देशों में भी बनाये गये थे। रूमानिया, बुल्गारिया, ग्रीस आदि देशों में भी ठीक इसी दौरान कोमिंटर्न की लाइन के तहत संयुक्त मोर्चे कायम किये थे।

हिटलर ने सोवियत संघ से अनाक्रमण संधि के बाद 'एण्टी कोमिंटर्न पैक्ट' को भंग नहीं कर दिया था। वह इस 'पैक्ट' को न केवल जारी रखे हुआ था बल्कि सोवियत संघ पर हमला करने की पूरी तैयारी कर रहा था। 1939 में हंगरी भी इस पैक्ट का सदस्य बन गया था।

इसलिए यह महज दुष्प्रचार और राजनीतिक बचकानापन है कि सोवियत संघ ने फासीवाद विरोधी तैयारी और उसके एक हिस्से के बतौर प्रचार रोक दिया था। यह न तथ्यों से मेल खाता है और न तर्क से।

पोलैण्ड का सवाल

किसी जमाने में जारशाही से लड़ने वाले और इसकी वजह से साईबेरिया निर्वासित हुए जोसेफ पिल्सुद्स्की ने अपनी मृत्यु (1938) तक पोलैण्ड में एक फासीवादी सत्ता कायम कर ली थी।

पिल्सुद्स्की ब्रिटिश व फ्रांसीसी साम्राज्यवादियों की आंख का तारा था। जिस वक्त सोवियत सत्ता गृहयुद्ध व बाहरी हस्तक्षेप से जूझ रही थी उस वक्त पिल्सुद्स्की भी सोवियत सत्ता के खिलाफ लड़ रहा था। बाद में ब्रिटेन ने लार्ड कर्जन के नेतृत्व में सोवियत संघ के साथ जो शांति संधि की थी उसके तहत उक्रैन और बेलोरूस का एक हिस्सा जबरदस्ती पोलैण्ड में शामिल कर दिया गया। हिटलर के आक्रमण के साथ जब पोलैण्ड की सरकार का पतन हो गया था तब इसी इलाके को पुनः सोवियत संघ में मिलाया गया था। इस इलाके में रहने वाले उक्रैनियों और बेलोरूसी लोगों ने लाल सेना का भव्य स्वागत किया और उन्होंने उसे अपना ऐसा मुक्तिदाता माना जो उन्हें फासीवादी हिटलर के चंगुल से बचा रहा था।

शेष पोलैण्ड पर हिटलर ने कब्जा कर लिया था। हिटलर पोलैण्ड पर कब्जे के बाद बाल्टिक देशों पर कब्जा करना चाहता था। सोवियत संघ ने उसकी इस योजना पर पलीता लगा दिया। लिथुआनिया, लाटविया और एस्टोनिया के साथ अक्टूबर 1939 में सैन्य गठबंधन कायम कर लिया। 1940 में ये देश स्वतंत्र गणराज्य के तौर पर सोवियत संघ में शामिल हो गये।

उक्रैनी और बेलोरूसी लोगों को हिटलर के फासीवादी चंगुल से मुक्त कराने की सोवियत कार्यवाही को अमेरिकी साम्राज्यवादी इस रूप में पेश करते थे कि स्तालिन और हिटलर ने मिलकर पोलैण्ड का बंटवारा कर लिया है। उन्हीं के सुर में सुर मिलाते हुए कई सोवियत समाजवाद और बोल्शेविक पार्टी का विरोध करने वाले इसे सोवियत संघ के साम्राज्यवादी होने के रूप में पेश करते हैं। आगे वे कहते हैं कि सोवियत संघ दूसरे विश्व युद्ध में अपने साम्राज्यवादी प्रभुत्व की इच्छा के साथ शामिल हुआ था। यह इतिहास का विद्रूपीकरण है। यह उन अमेरिकी साम्राज्यवादियों के हाथों में खेलना है जो किसी भी कीमत पर सोवियत समाजवाद का खात्मा चाहते थे। सोवियत समाजवाद को कलंकित करने के लिए वे हर तरह की कोशिश करते थे। सोवियत संघ के पोलैण्ड का बंटवारा करने के प्रमाण इतिहास में तथ्य सहित कभी नहीं दिये गये। उल्टे हिटलर के सोवियत संघ के इस कदम से बौखलाहट और क्षोभ बढ़ने के बहुत से प्रमाण व कारण मौजूद हैं। पोलैण्ड की सहायता के लिए ब्रिटिश, फ्रांसीसी, अमेरिकी साम्राज्यवादियों में से उस समय कोई आगे नहीं आया था जब हिटलर के आक्रमण के समय पोलिश सरकार सहायता की मांग कर रही थी।

फिनलैण्ड का सवाल

फिनलैण्ड में मैनरहाइम ने एक ऐसी सत्ता कायम की हुयी थी जो न केवल अपने देश के मजदूरों-किसानों का निर्मम दमन करने वाली फासीवादी सत्ता थी बल्कि वह घोर सोवियत संघ विरोधी थी। अपनी भू-राजनैतिक स्थिति के कारण फिनलैण्ड सोवियत विरोधी कार्यवाहियों का अड्डा बन गया था। पहले ब्रिटिश साम्राज्यवादियों और फिर फासीवादी जर्मनी ने सोवियत संघ पर आक्रमण करने के लिए किलेबंदी से लेकर सैनिक हवाई अड्डों का निर्माण किया हुआ था। सोवियत संघ का लेनिनग्राद शहर फिनलैण्ड की सीमा के करीब होने के चलते हमले की आसान जद में था। सोवियत संघ संभावित फासीवादी और साम्राज्यवादी हमले से अपनी सुरक्षा का ऐसा बंदोबस्त (खास तौर से सैनिक दृष्टि से) करना चाहता था ताकि फिनलैण्ड से उस पर हमला न हो। और यदि हमला हो तो लेनिनग्राद की रक्षा की जा सके। फिनलैण्ड से किसी गठबंधन की आस न देख सोवियत संघ ने 5 अक्टूबर 1939 को वार्ता का निमंत्रण भेजा। इसकी एक वजह और भी थी। फिनलैण्ड आर्थिक मंदी में बुरी तरह फंसा था और उसका समुद्री व जमीनी मार्ग युद्ध के कारण बंद था। सोवियत संघ उसे व्यापार के मार्ग देने के साथ-साथ खुद अपने साथ व्यापार का विकल्प दे सकता था।

फिनलैण्ड ने सोवियत संघ के इस प्रस्ताव कि सीमारेखा को थोड़ा पीछे खिसकाने और कुछ द्वीप जो सैन्य दृष्टि से जरूरी थे को देने और उसके बदले में उससे दुगने और तिगुने भू-क्षेत्र लेने को ठुकरा दिया और अपने देश को युद्ध के लिए तैयार करना शुरू कर दिया। फिनलैण्ड सोवियत संघ से कोई समझौता न कर ले इसके लिए अमेरिकी साम्राज्यवादियों ने दबाव बनाया हुआ था। कोई समझौता न हो सका।

नवम्बर में फिनलैण्ड ने पश्चिमी साम्राज्यवादियों के बहकावे में आकर उकसावे की कार्यवाहियां शुरू कर दीं। लाल सेना पर सीमा पार से हमले शुरू कर दिये। सोवियत संघ ने विरोध जताया तो भी फिनलैण्ड नहीं माना। 30 नवम्बर 1939 को लाल सेना ने फिनलैण्ड को मुंहतोड़ जवाब दे दिया।

युद्ध कुल चार माह भी नहीं चला। 12 मार्च 1940 को शांति-संधि पर दस्तखत होने के बाद युद्ध समाप्त हो गया। फिनलैण्ड की सहायता के लिए कोई नहीं आया लेकिन वह सोवियत संघ से संधि न करे इसके लिए उस पर दबाव व सैन्य सहायता का दिखावा किया गया।

शांति की संधि से सोवियत संघ ने लेनिनग्राद पर जमीनी व समुद्री मार्ग से होने वाले हमलों से बचाव का काम पूरा कर लिया। मैनरहाइम रेखा और हैंगों का बन्दरगाह ले लिया और इसके बदले में फिनलैण्ड से सोवियत संघ पर थोपे गये युद्ध का कोई हर्जाना नहीं लिया और तथा निकिल की खानें वापस कीं। भूख से बेहाल फिनलैण्ड को अनाज की सप्लाई की।

अन्ना लुई स्ट्रांग ने इस पर टिप्पणी की है,

"फिनलैण्ड युद्ध से हासिल सफलताएं फिनलैण्ड के बाहर भी जा फैली। पोलैण्ड में सोवियत सेना के कूच से लेकर फिनलैण्ड की संधि तक की सोवियत कार्यवाइयों की शृंखला से पूर्वी यूरोप को यकीन हो गया कि सोवियत संघ मजबूत है। उसे मालूम है उसे क्या चाहिए। और इसके लिए वह युद्ध की हद तक जा सकता है। लेकिन उसकी मांगें तर्क संगत और सीमित हैं। 1940 में एक चीज तो वह साफ तौर पर चाहता था। वह था बाल्टिक सागर से लेकर काले सागर तक चौड़ी बचाव पट्टी।" (पेज 112, 'स्तालिन युग', वही)

हिटलर के आक्रमण से पहले इस तरह सोवियत संघ ने हर दृष्टि से व्यापक तैयारियां कर ली थी। इसलिए बहुत से लोगों, खास तौर से संशोधनवादी ख्रुश्चोव का यह आरोप कि स्तालिन युद्ध से हक्के-बक्के रह गये थे और उन्होंने युद्ध के लिए पर्याप्त तैयारियां नहीं की थीं बेबुनियाद हैं। उसकी बातें झूठ का पुलिन्दा थीं और उसका मकसद स्तालिन की प्रतिष्ठा को ठेस पहुंचाना था। अंतर्राष्ट्रीय कम्युनिस्ट आंदोलन को जो क्षति साम्राज्यवाद न पहुंचा सका वह क्षति ख्रुश्चोव ने अपने कुत्सा प्रचार और विचारधारात्मक भ्रम फैला के पहुंचाई। लुडो मार्टिन्स ने इसका ठीक जवाब दिया है।

लुडो मार्टिन्स ने अपनी पुस्तक 'स्तालिन के बारे में अन्य दृष्टिकोण' में जुकोव को उद्धृत करते हुए लिखा है:

"सोवियत संघ की तैयारियों के सिलसिले में मार्शल जुकोव ने 1970 में अपनी स्मृतियों में जो लिखा था वह ख्रुश्चोव के आरोपों के खिलाफ ठीक ढंग से रेखांकित करता है कि वास्तविक सुरक्षा नीति स्टालिन के 1928 में औद्योगीकरण से शुरू होती है। ... ...

" 'सोवियत संघ की रक्षा की तैयारी स्टालिन ने 1928 से 1941के बीच 9000 ज्यादा फैक्टरियां बना कर शुरू कर दी थी और साथ ही यह रणनीतिक फैसला लेते हुए कि पूर्व में शक्तिशाली औद्योगिक आधार निर्मित किया जाय।' ... ...

"'1921 में सैन्य उत्पादन के हर क्षेत्र में शुरुआत कुछ नहीं से करनी थी। पहले और दूसरी पंचवर्षीय योजनाओं में योजना बनायी गयी कि युद्ध उद्योग को अन्य शाखाओं से ज्यादा द्रुत गति से बढ़ना चाहिए।'

" 'पहले दो योजनाओं के महत्वपूर्ण आंकड़े ये हैं

"1930 में टैंक का वार्षिक उत्पादन 740 इकाई था। 1938 में यह बढ़कर 2,271 इकाई हो गया।

"इसी दौरान हवाई जहाजों का वार्षिक उत्पादन 850 से 5,500 इकाई हो गया।

"तीसरी पंचवर्षीय योजना के दौरान, 1938 से 1940 के बीच औद्योगिक उत्पादन 13 फीसदी की दर से बढ़ा जबकि रक्षा उद्योग का उत्पादन 39 फीसदी की दर से बढ़ा'। ... ...

"'स्तालिन द्वारा वास्तविक सैन्य तैयारियों को तीव्र किया गया था। मई-अगस्त 1939 में जापान तथा दिसम्बर 1939-मार्च 1940 में फिनलैण्ड के साथ सैन्य टकराहटें फासीवाद विरोधी प्रतिरोध से सीधे जुड़ी हुयी थीं। इन आक्रामक कार्यवाहियों के अनुभवों का गहराई से विश्लेषण किया गया था और लाल सेना की कमजोरियों को दुरुस्त किया गया।'" (Ludo Martins,'Another view of Stalin' इंटरनेट संस्करण, अनुवाद हमारा)

सच है मजदूर वर्ग से गद्दारी कर चुका ख्रुश्चोव कैसे स्तालिन के महान योगदान को याद करता। वह तो साबित करने में लगा था वह और उसका गैंग था जिसने हिटलर को धूल चटाई। इतिहास ने ख्रुश्चोव को उसकी जगह पहुंचा दिया और स्तालिन मजदूर वर्ग और कम्युनिस्ट आंदोलन के महान प्रेरणास्रोत बने हुए हैं।

इसी तरह सोवियत संघ को उस समय साम्राज्यवादी देश साबित करने वाले जर्मन-सोवियत समझौते, पोलैण्ड, फिनलैण्ड आदि का हवाला खूब देते हैं परन्तु ये इसके साथ उन परिस्थितियों का खासतौर पश्चिमी साम्राज्यवादियों की कुत्सित चालों का जिक्र भी नहीं करते जिसके कारण सोवियत संघ को इन सबमें उलझना पड़ा। सोवियत संघ शांतिपूर्वक समाजवाद के निर्माण को आगे बढ़ाना चाहता था। युद्ध तो उस पर थोपा गया था। सोवियत संघ ने किसी देश पर अपना कब्जा कायम नहीं किया। फिनलैण्ड को पहले जारशाही से मुक्ति दी और 1940 में उसकी सम्प्रभुता, स्वतंत्रता का हरण नहीं किया बल्कि युद्ध में उसकी हार के बावजूद उसकी सहायता की। पोलैण्ड को फासीवाद के चंगुल से मुक्ति दिलायी और उनको उनका नया राष्ट्र दिया।

आगे हम इस बात की चर्चा करेंगे कि सोवियत संघ ने कैसे फासीवादियों को धूल चटाई।

VI

महान देश भक्तिपूर्ण युद्ध

फासीवाद की पराजय

सोवियत संघ पर आक्रमण करने के लिए हिटलर ने खूब तैयारियां की थीं। उसने यूं ही सोवियत संघ से अनाक्रमण संधि का प्रस्ताव नहीं रखा था। इस संधि के बाद सोवियत संघ पर हमले को संगठित करने के बीच के लगभग दो साल जर्मन फासीवादियों की

ताकत और आक्रमण करने की क्षमता में जबरदस्त वृद्धि के साल थे। आक्रमण के समय उसने ऐसे ही नहीं कहा था कि यह विश्व इतिहास का सबसे बड़ा सैन्य अभियान है। उसने अपने इस अभियान का नाम 'आपरेशन बारबरोसा' रखा था।

जर्मनी ने जिस वक्त सोवियत संघ पर हमला बोला था उसके साथ इटली, हंगरी, रूमानिया, फिनलैण्ड और बाद में जापान था। इन्होंने जर्मनी के साथ मिलकर सोवियत संघ पर हमला किया था। सोवियत संघ से अमेरिकी और ब्रिटिश साम्राज्यवादियों ने लम्बे समय तक किसी भी प्रकार के गठबंधन से मना कर दिया था और उल्टे उनका दृष्टिकोण क्या था? यह सोवियत संघ पर हमले के बाद दिये गये एक बयान से स्पष्ट हो जाता है।

> "सिनेटर ट्रूमैन ने, जो रूजवेल्ट के बाद संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति बने थे, 24 जून 1941 को कहा, 'अगर हम जर्मनी को जीतता देखें तो हमें रूस की मदद करनी चाहिए और अगर रूस को जीतता देखें तो हमें जर्मनी की मदद करनी चाहिए। इस प्रकार जितनों को वे मार सकें उन्हें मारने दें'" (फासीवाद, अयोध्या सिंह पृष्ठ 237, वही)

अमेरिकी व ब्रिटिश साम्राज्यवादियों का आम विश्वास था कि सोवियत संघ हिटलर के सामने तीन माह भी नहीं टिक पायेगा। सोवियत संघ की युद्ध की तैयारियों का पता उन्हें तब चला जब हिटलर को उसने सबक सिखाना शुरू किया।

जर्मन फासीवदियों की ताकत सोवियत संघ पर आक्रमण करने के पहले बहुत बढ़ चुकी थी। इसमें कोई संदेह नहीं है। उन्होंने सोवियत संघ पर हमले के पहले पूरी तैयारी कर ली थी। सोवियत संघ को घेरने के लिए पोलैण्ड, रूमानिया, फिनलैण्ड में सारी रणनीतिक व सैन्य तैयारियां कर ली थी। उसके इस हमले के समय ब्रिटिश साम्राज्यवादी जो उस समय बड़ी सैन्य ताकत थे मोर्चा खोल सकते थे। उन्होंने ऐसा नहीं किया और एक तरह से कई महीनों तक नाजियों से कोई लड़ाई नहीं लड़ी। अमेरिकी साम्राज्यवादी तो जर्मनों को हथियार बेचकर मुनाफा बटोर रहे थे। इस तरह जर्मनी के सोवियत संघ पर हमले के समय वह इस बात से बेफिक्र था कि उसके खिलाफ कोई मोर्चा पश्चिम में ब्रिटेन अथवा अमेरिका द्वारा खोला जायेगा।

जर्मनी की सैन्य व आर्थिक क्षमता का एक परिचय निम्न तालिकाएं देती हैं।

तालिका-1

जर्मनी की सैन्य व आर्थिक क्षमता

	1939[2]	1941[1]
आबादी	90,000,000[3]	290,000,000
औद्योगिक मजदूर	10,400,000	28,000,000
कोयला उत्पादन (टन में)	251,600,000	439,000,000
अल्यूमीनियम (टन में)	199,500	324,000
स्टील (टन में)	22,500,000	31,800,000

स्रोत : ग्रेट सोवियताना, Great Patriotic war of the Soviet Union 0f 1941-45][पेज 333]

1 कब्जा किये हुए इलाकों सहित

2 सेटेलाइट देशों और कब्जाये देशों सहित

3 अनुमानतः

तालिका से स्पष्ट है कि दो वर्षों में ही जर्मनी की ताकत कितनी बढ़ चुकी थी। तालिका 2 जर्मनी के सैन्य उत्पाद को दिखलाती है। एक वर्ष के भीतर ही जर्मनी की सैन्य साजोसामान में वृद्धि को दिखलाती है।

तालिका -2

जर्मनी का सैन्य उत्पाद

	1940	1941
तोपें (75 MM और उससे बड़ी)	5,000	7,000
इन्फैन्ट्री मोर्टार	4,000	4,000
टैंक (मध्यम)	1,400	2,900
टैंक (हल्के) और हथियारबंद कारें	800	2,300
एयर क्राफ्ट	10,250	11,030
राइफल और कार्बाइन	1,352,000	1,359,000

(स्रोत : वही, पेज 334)

22 जून 1941 की अल सुबह सोवियत संघ पर हिटलर ने अनाक्रमण संधि की धज्जियां उड़ाते हुए बिजली की गति से आक्रमण कर दिया। आक्रमण तीन ओर से किया गया था। उत्तर में जर्मन सेना फिनलैण्ड से हमलावर थी उसके निशाने पर लेनिनग्राद और आर्कटिक महासागर में स्थिति मर्मान्स्क बंदरगाह था। मध्य में वह पोलैण्ड से मास्को को घेरने को बढ़ी थी। और दक्षिण में रूमानिया से वह कीव व ओदेसा पर कब्जा चाहती थी।

दूसरे विश्व युद्ध का सबसे बड़ा हमला और उसके जवाब में सोवियत संघ का 'महान देशभक्तिपूर्ण युद्ध' शुरू हो चुका था। इस देशभक्तिपूर्ण युद्ध को तीन कालावधि में बांटा जा सकता है।

पहली अवधि : 22 जून 1941 से 18 नवम्बर 1942 तक : यह अवधि फासिस्ट जर्मनी के सोवियत संघ पर हमले से लेकर स्तालिनग्राद पर हमले तक चलती है। इस अवधि में सोवियत संघ मुख्य तौर पर रक्षात्मक अवस्था में होता है। इस अवधि में सबसे महत्वपूर्ण घटनाओं में एक 'मॉस्को की लड़ाई' है।

दूसरी अवधि -(19 नवम्बर 1942 से दिसम्बर 1943 तक) : इस अवधि की शुरूआत स्तालिनग्राद में प्रति आक्रमण से होती है। स्तालिनग्राद की लड़ाई इस अवधि की ही नहीं पूरे दूसरे विश्वयुद्ध की सबसे निर्णायक लड़ाई बन जाती है। इसके साथ हिटलर के पतन की शुरूआत होती है। इस अवधि की खासियत प्रतिआक्रमण और विजय की शुरुआत है।

तीसरी अवधि (जनवरी 1944 से मई 1945 तक) : इस अवधि की शुरुआत सोवियत संघ में जर्मनी की हार से होती है और यह अवधि मई 1945 तक जाती है। जब जर्मनी की फौज पूर्ण आत्मसमर्पण कर देती है। हिटलर आत्महत्या कर लेता है। इस दौर की मुख्य खासियत एक के बाद दूसरे देश का, फासीवाद के चंगुल से मुक्त होना है। यह अवधि फासीवाद के पूर्ण पराजय की अवधि है।

'महान देशभक्तिपूर्ण युद्ध की एक तस्वीर उभर सके इसके लिए हम संक्षेप में चर्चा करेंगे। क्योंकि यह युद्ध सोवियत संघ की रक्षा और मुक्ति के लिए पूरे देश की जनता द्वारा लड़ा गया इसलिए इसे 'महान देशभक्तिपूर्ण युद्ध' कहा गया।

पहली अवधि

22 जून 1949 को जर्मन फासीवादियों के अप्रत्याशित हमले ने सोवियत सेना को बहुत नुकसान पहुंचाया था। हिटलर ने ही 1939 में सोवियत संघ से अनाक्रमण संधि का प्रस्ताव किया था और उसने बिना संधि तोड़े, सोवियत संघ पर हमला बोल दिया था।

जर्मन हवार्ह जहाजों ने भयानक बमबारी करके, सोवियत संघ के सुरक्षा कवच को छिन्न भिन्न कर दिया था। उन्होंने हर ओर बम गिराये थे। हवाई उड्डों, नौसैनिक अड्डों, थल सेना के बैरकों, रेलवे स्टेशनों, हवाई पट्टियां कोई उनके निशाने से बच नहीं पायीं। हमले के दिन ही सोवियत संघ के 1200 हवाई जहाज नष्ट हो गये। जिनमें से सिर्फ 738 पश्चिम सैन्य क्षेत्र में नष्ट हुए विमानों की संख्या थी।

हिटलर ने जिस तरीके से यूरोप को जीता था वही तरीका उसने सोवियत संघ में अपनाया था। हजारों हवाई जहाजों से भयानक बम बर्षा और उसके पीछे हजारों टैंक और उसके पीछे लाखों की संख्या में मोटर कारों में आधुनिक हथियारों से लैस फौज। बिजली की गति से आक्रमण अचानक करना ताकि शत्रु को संभलने का कोई मौका न मिल सके। तीव्र गति से कब्जा करना और कब्जे में उसका 'पांचवां दस्ता' पहले से तैयार रहता। सत्ता में कब्जा करवाने में तुरंत भूमिका निभाता। साथ में नस्लवाद, अंधराष्ट्रवाद आदि से युक्त फासीवादी विचारधारात्मक हमला। हिटलर ने सोवियत संघ में वह सब कुछ किया जो वह कर सकता था परन्तु उसे वहां कोई 'पांचवां कालम' नहीं मिला।

हिटलर के साथ शीघ्र ही फिनलैण्ड (26 जून 1941), हंगरी (27 जून) और इटली (20 जुलाई) सोवियत संघ पर हमले करने लगे। फासीवादी सेनाओं की हवाई जहाज और टैंकों में श्रेष्ठता थी। इसके बूते तीन-चार हफ्तों के भीतर ही फासीवादी सेनाएं पांच सौ किलोमीटर से अधिक अंदर तक घुस आयी। उन्होंने लातविया, लिथुआनिया, यूक्रेन के विशाल भाग, बेलोरूस और मालदोवा पर कब्जा कर लिया।

फासीवादियों के सैन्य हमले के खिलाफ सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी सहित सोवियत सत्ता ने तुरंत मोर्चा संभाल लिया। सोवियत सेनाएं हमले के पहले दौर से तितर-बितर हो गयी थी। नुकसान बहुत ज्यादा था परन्तु यह स्थिति बहुत दिनों तक नहीं रहने वाली थी।

3 जुलाई, 1941 को महान सर्वहारा नेता स्तालिन ने देश को रेडियो के जरिये संबोधित किया। इस युद्ध के चरित्र और सोवियत जनता की क्षमता व साहस को जगाते हुए इस युद्ध के खिलाफ उठ खड़े होने का आह्वान किया। उन्होंने कहा कि यह युद्ध सोवियत राज्य के लिए जीवन-मरण का प्रश्न है। यह तय करेगा कि सोवियत संघ के लोग आजाद रहेंगे कि गुलाम बन जायेंगे। उन्होंने कहा लाल सेना, लाल नौसेना और सोवियत संघ के सभी नागरिकों को सोवियत भूमि के हर इंच की सुरक्षा करनी चाहिए और हर कस्बे, हर गांव के लिए अपने खून के अंतिम कतरे को बहा देना चाहिए। उन्होंने कहा यदि सेना को पीछे हटना पड़ता है तो हमें सारी चीजों को पीछे ढो के ले आना चाहिए और शत्रु को एक भी इंजन, एक भी रेल कार, अनाज का एक दाना, तेल का एक गैलन भी नहीं मिलना चाहिए।

आगे उन्होंने कहा कि यह युद्ध सारी जनता का युद्ध होना चाहिए। जिन हिस्सों पर कब्जा कर लिया जाये वहां गुरिल्ला इकाईयां गठित करके शत्रु पर हमला करना चाहिए। आगे उन्होंने कहा 'आगे बढ़ें न सिर्फ प्रतिरोध के लिए बल्कि विजय के लिए आगे बढ़ें।'

स्तालिन के भाषण से पूरा देश एकजुट हो गया और सारी जनता युद्ध के लिए तैयार हो गयी। एक तरह से वह एक संगठित सेना बन गयी। उसे एक सही दिशा और रणनीति मिल गयी। हिटलर का सामना अभी तक यूरोप में ऐसी जनता से नहीं हुआ था जो क्रांतिकारी थी और एक सूत्र में बंधी हुयी थी। हिटलर ने भाड़े के टट्टुओं से अभी तक लड़ाई लड़ी और जीती थी। अब उसके सामने ऐसे लोग थे जिन्हें खुद हिटलर हाड़मांस का नहीं मानता था।

शत्रु के हाथ कुछ न पड़ने देने की नीति के तहत कल कारखानों को देश के भीतरी और सुदूर पूर्व में पुनः स्थापित कर दिया गया। फसल को काटकर, ढोकर सुरक्षित स्थानों पर ले जाया गया। बच्चे महिलाएं सुरक्षित स्थानों पर भेजे गये परन्तु वह महान सोवियत जनता से निर्मित सेना के अभिन्न अंग बन गये। जो गुरिल्ला लड़ाई से लेकर उत्पादन तक, सभी कामों में बढ़चढ़ कर हिस्सा ले रहे थे। देश का हर नागरिक एक योद्धा बन गया। लड़ाई से पूर्व उनकी तरह-तरह से शारीरिक व तकनीकी कामों की ट्रेनिंग पहले ही हो चुकी थी। वे हथियार चलाना जानते थे और मशीनें भी।

एक तथ्य के अनुसार जुलाई से नवम्बर 1941 के बीच 1,523 औद्योगिक संस्थानों को जिनमें 1,360 बड़े बुनियादी सैन्य औद्योगिक इकाइयां थी देश के पूर्वी भाग में पुनः स्थापित की जा चुकी थी। इस तरह हिटलर का सोवियत संघ के जिन इलाकों पर कब्जा भी हुआ वहां चेक गणराज्य की तरह कोई हथियार बनाने वाला बड़ा स्कोडा जैसा कारखाना हाथ नहीं लगा।

हिटलर की फौजें सोवियत संघ में जिस वक्त भारी तबाही फैला रही थी ठीक उसी समय सोवियत संघ को कूटनीतिक व राजनैतिक स्तर पर अंतर्राष्ट्रीय पैमाने पर सफलता मिली। जुलाई माह में पहले ग्रेट ब्रिटेन और दिसम्बर के शुरुआत में संयुक्त राज्य अमेरिका फासीवाद के खिलाफ सोवियत संघ के साथ आने को तैयार हो गये।

12 जुलाई 1941 को सोवियत संघ और ग्रेट ब्रिटेन ने युद्ध में फासीवादी जर्मनी के खिलाफ संयुक्त कार्यवाही पर सहमति पत्र पर दस्तखत किये। 18 जुलाई को लन्दन में चेकोस्लोवाकिया और 30 जुलाई को पोलैण्ड की निर्वासित सरकार के साथ सोवियत संघ की इसी आशय की सहमति बनी। अगस्त में संयुक्त राज्य अमेरिका सोवियत संघ की मदद को तैयार हो गया।

दिसम्बर आते-आते युद्ध से दूर बैठी ताकतें भी युद्ध में खींच ली गई। 7 दिसम्बर को जापान ने पर्ल हार्बर में अमेरिका के नौसैनिक अड्डे पर हमला बोलकर उसे भारी नुकसान पहुंचा दिया। अमेरिका और ब्रिटेन ने जापान के खिलाफ युद्ध की घोषणा की तो जर्मनी और इटली ने संयुक्त राज्य अमेरिका के खिलाफ युद्ध की घोषणा कर दी। इस तरह विश्व युद्ध व्यापक और व्यापक होता गया।

सोवियत संघ के भीतर हिटलर की फौजों को शुरुआती सफलता के बाद भारी प्रतिरोध का सामना करना पड़ा। स्तालिन की 'सारी जनता का युद्ध', 'साझे मोर्चे कायम करना', 'यूरोप और अमेरिकी जनता की जनवादी स्वतंत्रता को बचाने का संघर्ष' आदि से सम्बन्धित नीतियां अपना रंग दिखाना शुरू कर चुकी थी। सोवियत संघ की नीति और उसकी जनता द्वारा हिटलर की फौजों को दी गयी चुनौती ने पूरी दुनिया को आपना कायल बना दिया था। हिटलर जितना सोवियत संघ में आगे बढ़ता गया उतना ही फंसता और धंसता गया। एक से बढ़कर एक संघर्ष की मिसाल कायम की गई। लाल सेना व सोवियत जनता सोवियत भूमि के एक-एक इंच की हिफाजत के लिए लड़ रहे थे। वे हर जगह हिटलर की फौजों को आगे बढ़ने से रोक रहे थे। आगे बढ़ने की गति धीमी पड़ने लगी थी।

> "होवर्ड के स्मिथ ने अपनी पुस्तक 'लास्ट ट्रेन फ्राम बर्लिन' (बर्लिन से आखिरी ट्रेन) में इस बात का वर्णन किया है कि इस सोवियत रणनीति ने किस तरह जर्मनी को थका डाला। जर्मन युद्ध तंत्र और जर्मन लोग यूरोप की लूट पर फूले-फले थे। लेकिन जब हिटलर ने रूस में प्रवेश किया तो जर्मन सेना और युद्ध तंत्र को अपनी जरूरतों के लिए तरस कर रह जाना पड़ा। उनकी सेना के अधिकारी द्नीपर नदी पर पहुंचने के बाद उस तहस-नहस बड़े बांध के पार द्नीपर उद्योगों की थी बड़ी-बड़ी इमारतें देख कर बड़े खुश हुए। स्मिथ बताते हैं कि सोवियत संघ में प्रवेश के बाद उन्हें साबुत कारखानों के दर्शन हुए थे। लेकिन जब वे इन इमारतों में पहुंचे तो पता चला कि हर मशीन और छोटे-बड़े कल-पुर्जे पूरब की ओर ढोकर ले जाये जा चुके हैं। स्मिथ का कहना था कि 'यह थी सुरक्षा'।" (स्तालिन युग, पेज.125, वही)

इस अवधि में 'मॉस्को की लड़ाई' (Battle of Moscow) एक ऐसी लड़ाई थी जिसके द्वारा सोवियत संघ ने एक तरह से घोषणा कर दी कि अब प्रति-उत्तर देने का वक्त आ गया है। 'मॉस्को की लड़ाई' ऐसी लड़ाई थी जिसके जरिये सोवियत संघ ने प्रति-आक्रमण की शुरुआत की। इससे पहले सोवियत संघ की सेना और जनता ने प्रतिरक्षा की लड़ाई लड़ते हुए एक के बाद एक शहर में हिटलर को चुनौती दी थी। स्मोलनस्क, कीव आदि शहरों में हिटलर की फौजें अंततः इन शहरों में कब्जा करने में सफल हो गई थी परन्तु लेनिनग्राद और मास्को में ऐसा नहीं हो सका। उत्तर में फासीवादी फौजों को लेनिनग्राद और मध्य में मॉस्को में रोक लिया गया था। लेनिनग्राद ढाई वर्षों तक जर्मन जकड़बंदी और गोलाबारी का बहादुरी पूर्वक सामना करता रहा। मॉस्को सोवियत संघ की राजधानी थी अतः उसकी लड़ाई का बहुत ज्यादा महत्व था। सैन्य, रणनीति की दृष्टि से लेकर मनौवैज्ञानिक स्तर पर भी इस लड़ाई का महत्व काफी ज्यादा हो गया था। हिटलर कई बार मॉस्को को जीतने की घोषणा कर चुका था परन्तु उसकी घोषणा बस घोषणा बन कर रह गयी।

मॉस्को से जब नाजी फौजें महज 80 किलोमीटर दूर थी और सोवियत सरकार विदेशी दूतावासों सहित वोल्गा नदी किनारे बसे शहर कुईविशेव में चली गयी तब स्तालिन ने मॉस्को में रहकर लाल सेना और जनता की हौसलाअफजाई की। हिटलर की फासीवादी फौजें जब मॉस्को के आसमान को धमाकों से गुंजा रही थी तब स्तालिन ने लाल चौक में 'महान अक्टूबर समाजवादी क्रांति' की याद में

नवम्बर में होने वाली परम्परागत परेड का आयोजन कराया और अपना वह मशहूर भाषण दिया जिसने सोवियत संघ की जनता को नये जोश व उत्साह से भर दिया। सोवियत जनता को दृढ़ विश्वास हो गया था कि वह हिटलर की फौजों को धूल चटा सकती है।

स्तालिन ने कहा,

"दुश्मन लेनिनग्राद के द्वार पर खड़ा है, ...।

"दुश्मन ने हिसाब लगाया हुआ था कि हमारी सेना उसके एक दम पहले ही प्रहार में बिखर जायेगी और हमारा देश घुटनों के बल झुकने को मजबूर हो जायेगा। लेकिन दुश्मन ने पूरा गलत हिसाब लगाया था ... ... हमारे देश-हमारे पूरे देश ने जर्मन हमलावरों की पराजय (rout) के लिए अपने आपको हमारी सेना और नौसेना के साथ मिलकर एक लड़ाकू शिविर में बदल दिया... ... ...

तब क्या यह संभव है कि हम जर्मन हमलावरों पर होने वाली विजय जो कि सुनिश्चित है पर संशय करें? दुश्मन उतना भी मजबूत नहीं है जितना उसे आतंकित बुद्धिजीवी पेश करते हैं। शैतान उतना भी खौफनाक नहीं जितना कि उसे पेश किया जा रहा है... ... ...

"साथियो लाल सेना और लाल नौसेना के लोगो; कमाण्डर और राजनीतिक प्रशिक्षको, स्त्री, पुरुष गुरिल्लओ... ... ... "पूरी दुनिया तुम्हारी ओर देख रही है जो ऐसी ताकत है जर्मन हमलावरों के संगठित गिरोह को ध्वस्त करने की क्षमता रखती है। यूरोप के गुलाम बनाये गये लोग जो कि जर्मन हमलावरों की दासता में हैं तुम्हारी ओर अपने मुक्तिदाता के रूप में देख रहे हैं। आपके कंधों पर मुक्ति का महा मिशन आ गया है... ... ...

"इस मिशन के योग्य हो ... ...

"लेनिनवाद के झण्डे तले-विजय की ओर बढ़ो!" **(Stalin, The twenty four Annivarsary Of the October Revolution 'Another view of Stalin', internet Ed.** अनुवाद हमारा)

15 नवम्बर को नाजी सेनाओं ने मॉस्को पर दूसरा आक्रमण किया और 23 नवम्बर को उनको मॉस्को के दक्षिण के उपनगरों में आगे बढ़ने में सफलता मिली परन्तु 5 दिसम्बर से सोवियत सेनाओं ने जबरदस्त प्रतिआक्रमण शुरू किया। नाजी सेनाओं के पांव उखड़ने लगे। मॉस्को की इस लड़ाई का महत्व बहुत अधिक सैन्य महत्व था खासकर प्रति-आक्रमण का कि इसने नाजी सेनाओं के अपराजेय होने के मिथक को तोड़ दिया। इस बात का सैन्य महत्व होने के साथ-साथ राजनैतिक महत्व भी था। यह लड़ाई सोवियत संघ के पक्ष में स्थितियां बदलने का सूचक बन गयी। इस लड़ाई में नाजी सेनाओं को भारी नुकसान उठाना पड़ा। उनकी सेना की 38 डिविजनें नष्ट कर दी गयीं।

1942 की गर्मियों में सोवियत संघ को अंतर्राष्ट्रीय पैमाने पर फासीवाद विरोधी मोर्चे को विस्तारित करने में कामयाबी मिली। करीब 28 देश इस मोर्चे में शामिल हो गये थे। फासीवाद के खिलाफ जन संघर्ष कई जगह शुरू हो गये थे। 26 मई, 1942 को सोवियत संघ और ग्रेट ब्रिटेन के बीच फासीवादी के खिलाफ युद्ध को लेकर संधि हुयी। इसी तरह 11 जून को संयुक्त राज्य अमेरिका से भी इसी तरह की संधि हुयी।

दूसरी अवधि

पश्चिमी साम्राज्यवादी ताकतों ग्रेट ब्रिटेन और संयुक्त राज्य अमेरिका से मई-जून में संधि होने के बावजूद सोवियत संघ अकेले ही नाजी सेनाओं से लड़ रहा था। उन्होंने संधि के कई महीने बाद भी अपनी फौजें नहीं उतारी। उधर जनवरी 1942 से नाजी नेताओं ने यूरोप में नरसंहार शुरू कर दिया था। अपनी लाख कोशिशों के बाद भी हिटलर की फौजें लेनिनग्राद और मॉस्को को अपने कब्जे में नहीं ले सकीं। अब उसके निशाने पर विशेष तौर पर स्तालिनग्राद था। उत्तर में यदि सोवियत सुरक्षा की धुरी लेनिनग्राद था तो दक्षिण में स्तालिनग्राद बन गया था।

19 नवम्बर, 1942 को स्तालिनग्राद की रक्षा और प्रतिआक्रमण शुरू होता है। 1942 की गर्मियों में हिटलर ने किसी भी कीमत पर स्तालिनग्राद पर कब्जे का आदेश नाजी फौजों को दिया हुआ था। स्तालिनग्राद पर कब्जे के लिए भारी संख्या में नाजी फौजें उतारी गयी थी। स्तालिनग्राद पर प्रतिदिन एक हजार हवाई जहाजों तथा एक हजार टैंकों से जर्मन सेना आक्रमण कर रही थी। स्तालिनग्राद को रौंद डाला गया था। हिटलर ने स्तालिनग्राद को जीत लेने की घोषणा कई बार की पर वह उसके हाथ न आया।

स्तालिनग्राद की जनता ने बड़ी बहादुरी से हिटलर की फौजों का सामना किया था। इस लड़ाई के दौरान कुछ नारे बहुत चर्चित हुए। 'अगर साहस हो तो ईंटों का ढेर भी किला बन जाता है', वोल्गा के उस पार कोई जमीन नहीं है'। और स्तालिन का यह कथन भी मशहूर हुआ 'दुश्मन से एक भी टीला छीनने से हमें वक्त भी मिल जाता है'। स्तालिनग्राद की जनता ने दुश्मन से हर जगह मोर्चा लिया और यहां तक कि रसोई में भी। वहां हथियार था खौलता पानी।

स्तालिनग्राद की लड़ाई पूरे दूसरे विश्व युद्ध की सबसे महान और निर्णायक लड़ाई थी। इसने युद्ध का रुख ही बदल दिया। अब तक विजयी रही जर्मन सेना इस लड़ाई के साथ हार के बाद हार खाने लगी। दोनों तरफ से लड़ने वाली फौज की संख्या 20 लाख तक जा पहुंची थी। दस लाख इधर से तो दस लाख उधर से। दुश्मन को मुंह की खानी पड़ी थी।

19 नवम्बर से शुरू हुआ प्रतिआक्रमण 2 फरवरी 1943 तक चला। 2 फरवरी 1943 को जर्मन सेना ने आत्मसमर्पण कर दिया। फासिस्ट जर्मनी के सैन्य सिद्धान्त को ढंग से पलीता लग गया था। इस युद्ध में जर्मनी की दो सेनाएं, रूमानिया की दो, और इटली की

एक सेना हताहत हुयी थी। कुल मिलाकर 32 डिवीजन और एक ब्रिगेड नष्ट हुयी थी। 16 डिवीजन अपने लड़ने की ताकत खो चुकी थी। स्तालिनग्राद की लड़ाई में दुश्मन ने कुल मिलाकर 15 लाख सैनिक खोये थे। 91,000 लोगों को सोवियत सेना द्वारा बंदी बनाया गया था। 10,000 से ज्यादा बंदूकें और इन्फैन्ट्री मोर्टार, 2000 टैंक और एसाल्ट गन और लगभग 2000 लड़ाकू और परिवहन जहाज दुश्मन ने खोये थे। (सभी तथ्य ग्रेट सोवियताना इनसाइक्लोपीडिया से)

स्तालिनग्राद में सोवियत सेना की विजय का प्रभाव न केवल देशव्यापी था बल्कि विश्वव्यापी था। यह दूसरे विश्व युद्ध के साथ-साथ महान देशभक्तिपूर्ण युद्ध की सबसे महत्वपूर्ण घटना और बदलाव का बिंदु बन गयी। यूरोप में हिटलर की फौज की हार की खबर ने फासीवाद से लड़ने वाली ताकतों का मनोबल बहुत ऊंचा कर दिया। लोगों में यह विश्वास जन्म लेने लगा कि हिटलर की हार तय है।

सोवियत संघ में इसके बाद हिटलर की फौजों के द्वारा कब्जा किये गये कई शहरों को आजाद कराने का सिलसिला शुरू हो गया। जनवरी 1943 में लेनिनग्राद में भी नाजी फौजों द्वारा की गयी घेराबंदी को तोड़ दिया गया। हालांकि लेनिनग्राद की पूर्णतया घेराबंदी से मुक्त कराने में लगभग एक वर्ष का समय लगा। लेनिनग्राद '900 दिन' के बहादुरीपूर्वक रक्षा के कारण जाना गया। वहां के हर व्यक्ति को इस दौरान 'लेनिनग्राद रक्षक' का पदक दिया गया।

जहां एक तरफ लाल सेना वीरता की नयी गाथा रच रही थी और एक के बाद एक शहर को आजाद कराती जा रही थी वहीं देश की जनता दो मोर्चों पर विजय हासिल कर रही थी। पहला, शत्रु को नागरिकों के गुप्त संगठन बनाकर और गुरिल्ला लड़ाई से हैरान-परेशान किया जा रहा था। और दूसरा, युद्ध सामग्री से लेकर खाद्यान्न का उत्पादन बढ़ाया जा रहा था। लाल सेना और जनता सोवियत संघ की कम्युनिस्ट पार्टी और स्तालिन के नेतृत्व में वह सब कर रही थी जिसकी आशा सोवियत संघ से बाहर किसी को नहीं थी।

दूसरी अवधि में लाल सेना ने फासीवादी सेना द्वारा कब्जाये गये लगभग दो तिहाई हिस्से आजाद करा लिया। जर्मन सेना को पश्चिम में 500 कि.मी. से 1300 कि.मी. तक पीछे खदेड़ा जा चुका था।

इधर दुनिया में सोवियत संघ की प्रतिष्ठा बढ़ती जा रही थी। 1943 में तेहरान कान्फ्रेंस होती है। इस कान्फ्रेंस में सोवियत संघ, ग्रेट ब्रिटेन और संयुक्त राज्य अमेरिका फासीवाद को निर्णायक शिकस्त देने के लिए संयुक्त अभियान तय करते हैं।

सोवियत संघ में मिल रही जीत का परिणाम विभिन्न देशों में चल रहे प्रतिरोध युद्धों पर भी सकारात्मक पड़ता है। पोलैण्ड, चेकोस्लोवाकिया, यूगोस्लाविया, बुल्गारिया, ग्रीस, अल्बानिया, फ्रांस सहित कई देशों में कम्युनिस्ट क्रांतिकारी प्रचार और फासीवाद विरोधी अभियान को तीव्र करते हैं। पूर्व में चीन की कम्युनिस्ट पार्टी जापानी फासीवादियों को पूरी ताकत से चुनौती दे रही थी। कोरिया प्रायद्वीप से लेकर वियतनाम तक कम्युनिस्टों के नेतृत्व में भूमिगत तरीकों से लेकर खुली गुरिल्ला लड़ाई के तरीके आजमाये जाते हैं। सोवियत संघ इन सबके लिए प्रेरणास्रोत बन जाता है।

तीसरी अवधि

1943 का अंत आते-आते सोवियत संघ की सेनाएं जर्मन सेना के चंगुल से यूक्रेन को आजाद करा लेती हैं। लेकिन अभी उसके कब्जे में सोवियत संघ का एक बड़ा हिस्सा होता है। एस्तोनिया, लातविया, लिथुआनिया, लेनिनग्राद और कालिनिन ओब्लास्ट (Oblasts) के एक हिस्से, मोलोदोवा और क्रीमिया पर नाजी सेनाओं का कब्जा बना हुआ था। जनवरी 1944 से लाल सेना का लक्ष्य होता है सम्पूर्ण सोवियत भूमि से जर्मन हमलावरों को बाहर करना। और इस काम को लाल सेना तेजी से करती है। अप्रैल 1944 तक सोवियत सेना नाजी सेनाओं को देश से खदेड़ चुकी होती है। सोवियत संघ फासीवाद के चंगुल से पूर्ण मुक्त हो चुका होता है।

अपने देश को फासीवाद से मुक्त कराने के बाद सोवियत सेनाएं रोमानिया की सीमा में प्रवेश करती हैं। अब यह स्पष्ट होने लगता है कि यूरोप में से अकेले अपने दम पर सोवियत सेना फासीवाद को खत्म कर सकती है। तब ब्रिटिश व अमेरिकी सेना 6 जून, 1944 को फ्रांस के उत्तर में नार्मण्डी में उतरती हैं। ब्रिटिश और अमेरिकी साम्राज्यवादी सोवियत संघ के बार-बार के दबाव के बावजूद हिटलर के खिलाफ मोर्चा नहीं खोलते हैं। सहमति और संधि के बावजूद अपनी बातों और वायदों से मुकरते रहते हैं या फिर जानबूझ कर अपनी सेनाओं को उतारने में देर करते हैं। वे अपनी सेनाएं तब उतारते हैं जब फासीवाद की कमर टूटने लगती है। जर्मन फासीवादियों को अब दो मोर्चों पर लड़ना पड़ता है।

सोवियत संघ की लाल सेना यूरोप में जैसे-जैसे आगे बढ़ती है उसका जन समर्थन बढ़ता जाता है। लम्बे समय से इन देशों में फासीवाद के खिलाफ गुप्त आंदोलन कम्युनिस्ट पार्टियां चला रही होती हैं।

जून 1944 में लाल सेना फासीवादी फिनलैण्ड की सेना को धूल चटा देती है। फिनलैण्ड के अनुरोध पर 19 सितम्बर 1944 को युद्ध-विराम के समझौते पर मॉस्को में दस्तखत होते हैं।

जुलाई और नवम्बर 1944 में लाल सेना और अधिक आक्रामक रुख अपनाते हुए जर्मन नाजियों की सेना की 29 डिविजनों को ध्वस्त करते हुए बाल्टिक क्षेत्र को आजाद करा देती है। इसके साथ ही दक्षिण में जसी-किसनोव (Jasi-Kishnov) अभियान के दौरान 18 डिविजनों को नष्ट कर रूमानिया को आजाद करा दिया जाता है। 23 अगस्त को रूमानिया में सशस्त्र जनसंघर्ष फूट पड़ा जिसके

कारण जरनल अंतानेस्कू की फासीवादी सत्ता ध्वस्त हो गयी। 12 सितम्बर को मॉस्को में रूमानिया जो कि फासीवादी कैम्प में रहा था और सोवियत संघ, संयुक्त राज्य अमेरिका व ग्रेट ब्रिटेन के बीच युद्ध विराम पर दस्तखत हो गये।

बुल्गारिया, जो कि रूमानिया की तरह फासीवादी कैम्प में था, में भी लाल सेना के प्रवेश के साथ जनविद्रोह फूट पड़ा। जारशाही-फासीवादी सत्ता का पतन हो गया। बाद में रूमानिया और बुल्गारिया ने लाल सेना के साथ मिलकर फासीवादी सेनाओं पर हमला बोल दिया। सत्ता परिवर्तन के साथ ये देश सोवियत जनता के मित्र बन गये।

इसी तरह सितम्बर-अक्टूबर, 1944 के बीच चेकोस्लोवाकिया, यूगोस्लाविया और हंगरी फासीवादी तानाशाही से आजाद हो गये। इन सभी देशों में जनता की जनवादी सत्ताएं कायम हो गईं।

1944 के अंत में मित्र देशों की सेनाओं ने फ्रांस, बेल्जियम, नीदरलैण्ड का एक हिस्सा, केन्द्रीय इटली और पश्चिम जर्मनी के कई हिस्सों पर कब्जा कर लिया। इधर जर्मनी के हाथ से एक के बाद एक देश निकल जाने और उसके कई सहयोगियों के साथ छोड़ देने से उसकी अर्थव्यवस्था और सैन्य जरूरतों के स्रोत सूखने लगे। उसका युद्ध उद्योग संकट ग्रस्त होने लगा। साथ ही उसके लड़ने की क्षमता प्रभावित होने लगी।

फरवरी, 1945 में क्रीमिया की यात्रा में मित्र देशों के राष्ट्र प्रमुखों स्तालिन, रूजवेल्ट और चर्चिल के बीच एक महत्वपूर्ण सम्मेलन होता है जिसमें फासीवादी जर्मनी को पूरे तरीके से शिकस्त देने के लिए सैन्य रणनीति व कार्यवाहियां तय होती हैं। और इसके साथ ही युद्ध की समाप्ति के बाद दुनिया में शांति और सुरक्षा की नीति तय होती है। मित्र राष्ट्रों ने जर्मन को खत्म करने, जर्मन फौजी उपकरणों को नष्ट करने, नाजी पार्टी और अन्य संगठनों-संस्थानों को खत्म करने के साथ युद्ध की समाप्ति के बाद जर्मन के भविष्य के सम्बन्ध में नीति बनायी गयी और निर्णय लिये गए।

लगातार आगे बढ़ती लाल सेना जो जर्मनी के पूर्व से एक के बाद एक देश को मुक्त कराते हुए आगे बढ़ रही थी और जर्मन के पूर्व के पश्चिम से अमेरिकी-ब्रिटिश सेना की बढ़त फासीवादी जर्मन के अंतिम दिनों को नजदीक लाती जा रही थी। यही स्थिति इटली की थी।

हिटलर की सारी सैन्य योजनाएं एक के बाद एक असफल होने लगी। नाजी सेना में बिखराव शुरू हो गया। हिटलर की हताशा बढ़ती जा रही थी। बढ़ती हताशा और हार के भय के बीच हिटलर ने 30 अप्रैल 1945 को आत्महत्या कर ली। उसके ठीक दो दिन पहले मुसोलिनी को 28 अप्रैल को उसके कुकर्मों के अनुरूप गोली मार दी गयी।

लाल सेना अप्रैल के अंत और मई के पहले हफ्ते में तेजी से बर्लिन की ओर बढ़ रही थी। मई को फासीवादी जर्मनी की सेनाओं ने बिना शर्त आत्मसर्पण कर दिया। 9 मई को जर्मनी हिटलर के फासीवादी चंगुल से मुक्त हो चुका था। जापानी फासीवादियों के खिलाफ मित्र देशों की सेनाओं ने तेजी से कार्यवाही की। 2 सितम्बर 1945 को जापान ने भी बिना शर्त आत्मसमर्पण कर दिया।

इस तरह से दूसरा विश्व युद्ध समाप्त हो गया। और इसके साथ ही 'महान देशभक्ति पूर्ण युद्ध' जिन वजहों से शुरू हुआ था उसने अपना अभीष्ट हासिल कर लिया। सोवियत संघ की महान जनता ने अपनी लाल सेना और सोवियत कम्युनिस्ट पार्टी के नेतृत्व में सोवियत समाज को फासीवादी के चंगुल से मुक्त करा दिया। इसी तरह पूरा यूरोप भी फासीवाद के चंगुल से मुक्त हो गया। फासीवाद की चुनौती समाप्त होते ही अमेरिकी और ब्रिटिश साम्राज्यवादी अपनी घृणित चालों में उतर आये और सोवियत संघ को हर मोर्चे पर घेरने की कोशिश करने लगे। उनका सारा प्रयास अपने प्रभुत्व व प्रभाव को कायम करना और आगे बढ़ाना था। इसमें उन्हें सबसे बड़ी बाधा सोवियत समाजवाद ही दिखयी देता था। सोवियत समाजवाद ने फासीवाद को हराने में केन्द्रीय और निर्णायक भूमिका निभायी थी। दूसरे विश्वयुद्ध के समाप्त होने के साथ ही पूर्व से लेकर पश्चिम तक कई देशों में ऐसी सत्ताएं अस्तित्व में आ गईं थीं जिनका लक्ष्य समाजवाद की स्थापना करना था। समाजवादी खेमे के अस्तित्व में आने और राष्ट्रीय मुक्ति की लड़ाई से आतंकित साम्राज्यवादी कुत्सित चालों पर उतर आये। समाजवादी क्रांतियों और राष्ट्रीय मुक्ति की लड़ाई को रोकने के लिए रात-दिन एक करने लगे।

दूसरे विश्व युद्ध में भारी जनहानि हुयी थी। कुल मिलाकर 5 करोड़ से अधिक लोग मारे गये थे। इनमें 2 करोड़ लोग तो सिर्फ सोवियत संघ के मारे गये थे। सोवियत संघ की बहादुर जनता ने अपने खून से अपने देश और समाजवाद की रक्षा की थी।

VII

ऐतिहासिक सबक

इस लेख के एकदम शुरू में हमने दो उद्धरण दिये थे। ये उद्धरण हमें बतलाते हैं कि फासीवाद वित्तीय पूंजी की सबसे ज्यादा प्रतिक्रियावादी, सबसे ज्यादा अंधराष्ट्रवादी और सबसे ज्यादा साम्राज्यवादी तत्वों की आतंकवादी तानाशाही है, कि फासीवाद का मुख्य लक्ष्य मजदूरों के क्रांतिकारी हरावल को अर्थात सर्वहारा के कम्युनिस्ट हिस्सों और प्रमुख दस्तों को नष्ट करना है। और जब हम फासीवाद के जन्म और विकास को देखते हैं, उसके कारनामों को देखते हैं तो हम पाते हैं कि कम्युनिस्ट इंटरनेशनल की थीसिसें एकदम सही थीं। फासीवाद का जन्म ऐसे समय में हुआ था जब समाज में क्रांतिकारी संकट था और सामान्य ढंग से पूंजी अपना शासन कायम नहीं रख पा रही थी।

आज की दुनिया को जब हम देखते हैं तो पाते हैं कि पूंजीवादी व्यवस्था का संकट गहराता जा रहा है। सभी बुनियादी अंतर्विरोध (श्रम और पूंजी, साम्राज्यवाद और जनता, साम्राज्यवादियों के आपसी अंतर्विरोध) उस दिशा में आगे बढ़ रहे हैं जहां कभी भी क्रांतिकारी संकट कई देशों में फूट सकता है। ऐसे में सवाल वहां जाकर खड़ा हो जायेगा कि 'बर्बरता या सभ्यता'। फासीवाद या समाजवाद। और ऐसे समय में जब ये लगने लगेगा कि मजदूर वर्ग अपने हरावल के नेतृत्व में समाजवादी क्रांति कर देगा तब वित्तीय पूंजी जिसका दुनिया में राज है, अपने शासन के सबसे नग्न रूप फासीवादी तानाशाही कायम कर लेगी। यह खतरा जितना पिछली सदी के बीस-तीस के दशक में था उतना ही खतरा कभी भी प्रकट हो सकता है।

आज पूरी दुनिया में शायद ही कोई ऐसा मुल्क हो जहां घोर प्रतिक्रियावादी तत्वों से लेकर नवफासीवादी तत्वों की मौजूदगी न हो। और उन्हें वित्तीय पूंजी का खुला-छिपा, कम या ज्यादा संरक्षण न प्राप्त हो। इस तरह फासीवाद की भौतिक व आत्मिक जमीन मौजूद है। संगठन, संस्थाएं, पार्टियां मौजूद हैं। पूंजीवाद का संकट मौजूद है और संकट के क्रांतिकारी होने की स्थिति में फासीवाद का खतरा मौजूद है।

सोवियत समाजवाद के फासीवाद से लड़ने के दौरान हासिल बहुमूल्य सबक भी इसके साथ मौजूद हैं कि किस तरह बोल्शेविक पार्टी ने भीतरी और बाहरी दुश्मनों का सामना किया था, कि युद्ध में अंतिम निर्णायक चीज जनता होती है, कि किस तरह फासीवाद से लड़ने की मंशा जाहिर करने वाले साम्राज्यवादी अंत तक सोवियत समाजवाद को खत्म करने का षड्यंत्र करते रहे। और जब उनके खुद के वजूद पर खतरा आ गया तब ही सोवियत समाजवाद के साथ संश्रय कायम करने को वे तैयार हुए और जैसे ही फासीवाद का खतरा मिटा, वैसे ही वे तुरन्त सोवियत समाज, क्रांतियों और मजदूर आंदोलन का विनाश करने के लिए पूरी ताकत झोंक देते हैं। इंडोनेशिया, ग्रीस आदि कई देशों में क्रांतियों को खून की नदी में डुबो दिया जाता है। बेर-केर का संग कितना और किस तरह चल सकता है।

इस तरह बीसवीं सदी की सफल-असफल क्रांतियों, फासीवाद के खिलाफ सोवियत संघ की सफल लड़ाई से लेकर स्पेन में असफल लड़ाई आदि के सबक मौजूद हैं। स्तालिन की बात मौजूद है कि शैतान उतना भी खौफनाक नहीं जितना कि उसे पेश किया जाता है, कि दुश्मन उतना भी मजबूत नहीं जितना कि आतंकित बुद्धिजीवी उसे पेश करते हैं।

सोवियत समाजवाद के अनुभव से यह बात साफ होती है कि हिटलर वहां इसलिए भी कामयाब नहीं हो पाया कि वहां 'पांचवां दस्ता' नहीं था। पांचवें दस्ते को समय रहते ही कुचल दिया गया था। परन्तु 'पांचवें दस्ते' को पैदा करने वाली जमीन सोवियत संघ में मौजूद रही जो अंततः पूंजीवाद की पुनर्स्थापना का कारण बनी। सोवियत समाजवाद को हिटलर नहीं हरा सका लेकिन वह 1956 में हार गया जब वहां पूंजीवाद की वापसी हुयी। माओ ने इस पूंजीवादी पुनर्स्थापना की ठीक-ठीक वजहें बतायी और बताया कि महान सर्वहारा सांस्कृतिक ही 'पांचवें दस्ते' का मूलोच्छेद कर सकती है।

मजदूर वर्ग के पास तीन जादुई हथियार (कम्युनिस्ट पार्टी, लाल सेना और क्रांतिकारी संयुक्त मोर्चा) थे जिसके दम पर फासीवाद को शिकस्त दी गयी और आज यही तीन जादुई हथियार हैं जिनसे अगर भविष्य में फासीवाद सर उठाता है तो उसे कुचल कर, उसकी कब्र खोदी जा सकती है।

आखिरी बात यह कि यदि भविष्य में साम्राज्यवादी तीसरा विश्वयुद्ध छेड़ते हैं तो क्या होगा? माओ ने कहा था कि या तो क्रांतियां विश्वयुद्ध को रोक देंगीं या फिर विश्वयुद्ध क्रांतियों को बढ़ावा देगा। पहले और दूसरे विश्व युद्ध के बाद जहां पहले युद्ध के समय महान अक्टूबर समाजवादी क्रांति हुई वहीं दूसरे विश्वयुद्ध बाद चीन की नवजनवादी क्रांतियों सहित कई देशों में क्रांतियां हो गई थीं। इसलिए स्तालिन ने जो बात जर्मन फासीवाद के संदर्भ में 3 जुलाई 1941 को कही थी उसे पुनः स्मरण करते हुए कि -

"आगे बढ़ें न सिर्फ प्रतिरोध के लिए बल्कि विजय के लिए आगे बढ़ें!"

यही बात भारत में बढ़ते हिन्दू फासीवाद के खतरे के संदर्भ में भी लागू होती है।

■■■

परिशिष्ट

[जर्मन फासीवादी पार्टी का सिद्धान्त अपनी मुख्य मांगों (core demand) के साथ ऐसी भी मांगे पेश करता है जो वह अपने निम्न मध्यवर्गीय व मजदूर आधार को विकसित करने के लिए रखता है। फासीवाद के चरित्र को समझने के लिए इन मांगों को समझना जरूरी है-लाल सलाम]

"ऐतिहासिक दस्तावेज"

"जर्मन फासीवादी पार्टी के 25 सिद्धान्त

1- हमारी मांग है कि एक संपूर्ण जर्मनी जिसमें सारे जर्मन एकीकृत हों अपने कानून का स्वयं इस्तेमाल करते हुए।

2- हम जर्मन जनता के कानूनों को अन्य राष्ट्रों के कानूनों के समान चाहते हैं हम प्रथम विश्व युद्ध के बाद के जर्मनी और आस्ट्रिया से हुई वेरसाई और सेंजमैं की संधियों को भंग करने की मांग करते हैं।

3- हम अपनी अधिक जनसंख्या को बढ़ाने और अपनी जनता के पोषण के लिए धरती और उपनिवेश की मांग करते हैं।

4- नागरिक कानूनों का लाभ केवल नागरिकों को मिले। नागरिक होने के लिए जर्मन खून होना अनिवार्य है-संप्रदाय कोई भी हो। इसलिए कोई भी यहूदी नागरिक नहीं हो सकता।

5- गैर नागरिक जर्मन शरणागत की ही तरह रह सकते हैं और विदेशियों पर लागू होने वाले कानूनों के मातहत ही रह सकते हैं।

6- राज्य की दिशा और कानून निर्धारित करने का अधिकार सिर्फ नागरिकों को प्राप्त है। इसलिए हमारी मांग है कि किसी भी तरह का सार्वजनिक कार्य गैर नागरिक नहीं कर सकते। हम भ्रष्टाचार की जननी संसदीय व्यवस्था, जिसमें व्यक्ति का चरित्र या क्षमता देखे बिना पार्टी के आधार पर पोस्ट मिलते हैं, का प्रतिकार करते हैं।

7- हमारी मांग है कि राज्य सभी नागरिकों के जीवनयापन के साधन मुहैय्या करे, अगर सारे आबादी का पोषण नहीं कर सकता तो गैर नागरिकों को देश से निकाल दिया जाना चाहिए।

8- सभी गैर जर्मनों का जर्मन में बसना रोकना चाहिए। हमारी मांग है कि 2 अगस्त 1914 के बाद जर्मनी में आकर बसने वाले लोगों को जर्मन छोड़ने पर मजबूर किया जाए।

9-सभी नागरिकों के समान अधिकार और कर्तव्य हैं।

10-. सभी नागरिकों का प्रथम कर्तव्य है शारीरिक या बौद्धिक रूप से काम करना। व्यक्ति के कर्म समुदाय के हित में विलीन नहीं होने चाहिए बल्कि उसके और सभी के हित में दर्ज होने चाहिए। इसलिए हमारी मांग है कि :

11-. आसान और बिना मेहनत की कमाई का अंत हो-सूद की गुलामी खत्म हो।

12- यह देखते हुए कि युद्ध में अपार जन और धन की बलि चढ़ती है युद्ध द्वारा नाम कमाने को जनता के विरुद्ध करार दिया जाना चाहिए। हम बिना अपवाद के युद्ध द्वारा कमाये गये लाभ को जब्त करने की मांग करते हैं।

13-हम आज ट्रस्ट के उपक्रमों के राष्ट्रीयकरण की मांग करते हैं।

14- हम बड़े उपक्रमों के लाभ में भागीदारी की मांग करते हैं।

15- सेवानिवृत्त लोगों के पेंशन में हम वास्तविक बढ़ोत्तरी की मांग करते हैं।

16- हम एक स्वस्थ मध्यमवर्ग के निर्माण और उसकी सुरक्षा की मांग करते हैं। हमारी मांग है कि बड़ी दुकानें छोटे दुकानदारों के सहकारी प्रशासन के लिए सौंप दी जाएं। आपूर्ति के सारे ठेके छोटे व्यवसायियों और उद्योगपतियों को सौंपी जायें।

17- हम अपनी जरूरत के अनुसार कृषि सुधार की मांग करते हैं। हम जनहित में भूमि के बिना मुआवजे के अधिग्रहण की मांग करते हैं। हम वित्तीय सट्टेबाजी पर पाबंदी की मांग करते हैं।

18- हम जनहित के विरुद्ध काम करने वालों के विरुद्ध निर्मम संघर्ष की मांग करते हैं। कानून तोड़ने वालों, तस्करों और सूदखोरों को फांसी देने की मांग करते हैं।

19- भौतिकवादी धारणा की दुनिया के लिए बने रोमन कानून की जगह हम एक जर्मन कानून व्यवस्था की मांग करते हैं।

20- शैक्षिक व्यवस्था का विस्तार किया जाए ताकि सभी प्रतिभाशाली जर्मनों और मेहनतकशों को बेहतर शिक्षा मिल सके वे महत्वपूर्ण पद पा सकें। सभी शैक्षिक संस्थाओं के कार्यक्रम व्यावहारिक जीवन की आवश्यकताओं के अनुकूल हों। शुरू से ही स्कूलों में राष्ट्रीय भावना जाग्रत की जाए। हमारी मांग है कि सभी प्रतिभाशाली विद्यार्थियों, विशेषकर गरीब परिवारों के, की शिक्षा का भार राज्य वहन करे।

21- राज्य मांओं और बच्चों की सुरक्षा द्वारा जनस्वास्थ्य की निगरानी करे। नौजवानों को शारीरिक शिक्षा में लगे संगठनों और खेलों और जिम्नास्टिक के विकास के लिए कानून की भी मदद ली जाए।

22- हम भाड़े की फौज का अंत और राष्ट्रीय सेना की मांग करते हैं।

23- हम जानबूझ कर राजनीतिक झूठ और उसके प्रेस द्वारा प्रचार के विरुद्ध कानूनी संघर्ष की मांग करते हैं। एक जर्मन प्रेस संगठित हो इसके लिए हमारी मांग है कि :

(अ) जर्मन भाषा में प्रकाशित सभी पत्र-पत्रिकाओं के सभी निदेशक आदि केवल जर्मन हों।

(ब) गैर जर्मन प्रेस को नियंत्रित रखा जाए और उसे जर्मन भाषा में छापने पर पाबंदी लगे।

(स) जर्मन प्रेस गैर जर्मन प्रभाव और वित्तीय भागीदारी पर कानूनी रोक लगे। इस क्षेत्र के सभी गैर जर्मनों को जर्मनी से बाहर कर देने और अपराधी प्रेस उपक्रमों को बंद कर देने की मांग करते हैं ऐसे अखबार जो जनहित के विरुद्ध हैं उन्हें बंद कर देना चाहिए।

हमारी मांग है कि ऐसी साहित्यिक और कलात्मक शिक्षा जो राष्ट्रीय जीवन को विघटित करे उसके विरुद्ध कानून बने और ऐसी संस्थाएं बंद कर दी जाएं।

24- हम हर संप्रदाय के धर्मों को राज्य के अंतर्गत स्वतंत्रता की मांग करते हैं बशर्ते कि वे राज्य और जर्मन जाति की भावना के लिए खतरा न बनें। पार्टी रचनात्क इसाईयत के दृष्टिकोण की रक्षा करती है बिना किसी संप्रदाय विशेष से जुड़े। पार्टी के अंदर और बाहर यहूदी भौतिक सारतत्व से संघर्षरत हैं और वह मानती है कि जर्मन जाति की सुदृढ़ व्यवस्था इसी सिद्धान्त पर आधारित हो सकती है-विशेष हितों के पहले सामान्य हित।

25- यह सब ठीक से संपन्न हो इसके लिए हम एक शक्तिशाली केन्द्रीय सत्ता और हर स्तर पर इसे लागू करने के लिए पेशेवर और म्यूनिसिपल समितियां बनाने की मांग करते हैं।

पार्टी के संचालक वादा करते हैं कि उपर्युक्त कार्य सम्पन्न करेंगे और इसके लिए जरूरत पड़ी तो अपनी जान भी बलिदान कर देंगे।

म्यूनिख, 24 फरवरी 1920

(स्रोत :"फासीवाद : सिद्धान्त और व्यवहार', लेखक-रोजे बूर्दरों, अनुवाद-लाल बहादुर वर्मा, ग्रंथ शिल्पी, नई दिल्ली, जोर हमारा)

■■■